# डंकेल प्रस्ताव : आर्थिक संप्रभुता संकट में

जुलाई, 1992

नेशनल वर्किंग ग्रुप ऑन पेटन्ट लॉज़
79, नेहरु प्लेस (प्रथम तल), नई दिल्ली 110 019

# विषय - सूची

1. प्रस्तावना - डा. नित्यानन्द 1

2. आर्थिक संप्रभुता बचाए रखने के लिए अपील 2

3. डंकेल ड्राफ्ट : सरकार प्रदत्ती संक्षिप्त विवरण का नेशनल वर्किंग ग्रुप ऑन पेटेन्ट लॉज द्वारा विश्लेषण 4

4. डंकेल प्रस्ताव ।का संक्षिप्त विवरण 14

5. भारतीय पेटेन्ट अधिनियम, 1970 की प्रमुख विशेषता - बी. के. कैला 18

6. भारतीय पेटेन्ट व्यवस्था और विकसित देशों की प्रतिक्रिया - बी.के. कैला 21

7. भारतीय मूल्यों पर डंकेल का हमला - वन्दना शिवा 23

8. दो खेमो की लड़ाई है कृषि उदारिकरण का मुद्दा -ऊषा मेनन 25

9. विवाद निपटारा पद्धति के सन्दर्भमें वैकल्पिक रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए - डा. बी.एस. चिमनी 27

10. सुझाए गए परिवर्तन विकासशील देशों के हित में नहीं - विश्वजीत धर 28

11. 'गेट' अब खुले बाजार का केन्द्र बन चुका है - बी.के. कैला 29

12. विदेशी दबाव का दुष्चक्र - गोविंद मिश्र, बी. डी. एस. गौतम 31

## प्रस्तावना



भारत में पेटेन्ट कानूनों के संबंध में एक राष्ट्रीय कार्यकारी दल का गठन अगस्त, 1988 में किया गया । इस दल में वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों, वकीलों, पत्रकारों, स्वास्थ्य संगठनों, उपभोक्ता संगठनों, मजदूर संगठनों, औद्योगिक संघों और अन्य संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने करने वाली भिन्न-भिन्न प्रकार की गैर सरकारी संस्थाएं शामिल हैं । यह पहल उन कतिपय विदेशी हितों द्वारा शुरू किये गये उस आक्रामक अभियान के उत्तर के रूप में की गई है जो भारतीय पेटेन्ट अधिनियम, 1970 में पर्याप्त परिवर्तनों की मांग कर रहे हैं । इस कार्यकारी दल का लक्ष्य निम्नलिखित उद्देश्य प्राप्त करना है :

- पेटेन्ट कानूनों और पेरिस कन्वेंशन से संबद्ध मुद्दों पर विचार करना,
- इन मुद्दों के संबंध में अनुसंधान करना और प्रबन्ध-पत्र प्रकाशित करना,
- इन समस्याओं को भली-भान्ति समझने के लिए उचित वातावरण तैयार करने के वास्ते बैठकें, संगोष्ठियां और सार्वजनिक चर्चाएं आयोजित करना,
- कार्यकारी दल के परस्पर सम्मत दृष्टिकोण को सरकार तथा इस संबंध में नीति निर्धारित करने वाले पक्षों के सम्मुख प्रस्तुत करना,
- प्रचार एवं प्रदर्शियों का आयोजन करना,
- भारत के और अन्तर्राष्ट्रीय पेटेन्ट कानूनों और नीतियों के बारे में विभिन्न संगठनों/मंचों/संघों आदि के राष्ट्रीय संघ की स्थापना करना ताकि भारत के सर्वोत्तम हितों को ध्यान में रखते हुए पेटेन्ट कानूनों और नीति तैयार करने के वास्ते मिलकर काम किया जा सके और अभियान चलाया जा सके ।

कार्यकारी दल ने भारत और अन्य देशों में प्रचलित पेटेन्ट व्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर कई अध्ययन करवाए । दल ने तीसरी दुनिया के अन्य देशों के अनुभव के संदर्भ में औद्योगिक सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए भारत द्वारा पेरिस कन्वेंशन में शामिल होने के परिणामों का भी अध्ययन किया ।

कार्यकारी दल ने नवम्बर, 1988 में पेटेन्ट कानूनों के विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया और दिसम्बर, 1989 में विज्ञान, टेक्नालाजी और पेटेन्ट के विषय पर वैज्ञानिकों का एक राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया । इन दोनों आयोजनों में देश के जाने-माने वैज्ञानिकों, विधि विशेषज्ञों, वकीलों, अर्थशास्त्रियों, तकनीकी विशेषज्ञों, अधिकारियों, विशेषज्ञों, उपभोक्ता संगठनों ने भाग लिया और भारतीय पेटेन्ट अधिनियम, 1970 में किसी प्रकार का परिवर्तन करने के खिलाफ सर्वसम्मत प्रस्ताव पास किया ।

कार्यकारी दल द्वारा आयोजित अध्ययन और प्रस्तुत किए गए प्रबन्ध पत्र प्रकाशित किए गए और बांटे गए ताकि जनता को, विशेषकर प्रबुद्ध नागरिकों और संस्थाओं को पेटेन्ट व्यवस्था की जानकारी दी जा सके और उन्हें भारत द्वारा पेरिस कन्वेंशन में शामिल होने की सूरत में देश की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर पड ने वाले प्रभाव से अवगत कराया जा सके । इस

विषय को भारत की संसद में कई बार उठाया गया है और उस पर चर्चा की गई है । अतः हम कह सकते हैं कि कार्यकारी दल पेटेन्ट व्यवस्था से संबद्ध महत्वपूर्ण मुद्दों के बारे में जागरूकता पैदा करने और वातावरण का निर्माण करने में सफल रहा है और उसने काफी हद तक वे लक्ष्य प्राप्त कर लिए हैं, जिनके लिए इसका गठन किया गया था ।

वर्ष 1990 के प्रारम्भ में यह महसूस किया गया कि पेटेन्ट व्यवस्था के संबंध में राष्ट्रीय हितों पर ध्यान केन्द्रित करने और नीति निर्माताओं को इससे अवगत कराने के लिए सभी विकासशील देशों में इसी प्रकार के जन-जागरण की शुरूआत की जाए । इसकी पृष्ठभूमि में भावना यह थी कि विकासशील देशों की सरकारें "गैट" आदि जैसे उन विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर अपना सर्वसम्मत दृष्टिकोण रख सके जहां विकसित देश पेटेन्ट व्यवस्था के विषय पर विकासशील देशों पर अपना दृष्टिकोण थौंपने के लिए दबाव डाल रहे हैं ! इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए नई दिल्ली में मार्च, 1990 में तीसरी दुनिया के देशों का पेटेन्ट सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें कई विकासशील देशों के 11 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया और इस विषय के विभिन्न पहलुओं पर पूरे दो दिन तक व्यापक रूप से विचार-विमर्श किया । इस सम्मेलन में **"नई दिल्ली घोषणा : बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार और दायित्व संबंधी तीसरा विश्व सम्मेलन"** सर्वसम्मति से पारित की गई । इसके बाद से कार्यकारी दल पेटेन्ट संबंधी मामलों पर तीसरी दुनिया के देशों में विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों से जानकारी का आदान-प्रदान कर रहा है ।

गैट वार्ता के संबंध में सबसे हाल की स्थिति का मूल्यांकन करने के बाद कार्यकारी दल ने दिनांक 28 अक्तूबर, 1990 को एक विचारोत्तेजक कार्यशाला का आयोजन किया और गैट वार्ता के उरूगुए राउंड और पेटेन्ट कानूनों के बारे में नई दिल्ली घोषणा जारी की । सभी प्रबुद्ध पक्षों ने इस घोषणा का हार्दिक स्वागत किया ।

गैट वार्ता के उरूगुए राउंड का समापन दिसम्बर, 1990 के प्रथम सप्ताह में होना था । बहुपक्षीय व्यापार वार्ता के उरूगुए राउंड के निष्कर्षों का 390 पृष्ठों का अन्तिम पाठ पेटेन्ट कानूनों संबंधी राष्ट्रीय कार्यकारी दल को दिसम्बर, 1990 के शुरू में प्राप्त हुआ । हमारे संयुक्त संयोजक ने 28 नवम्बर से 01 दिसम्बर, 1990 तक ब्रसेल में वार्ता के दौरान गैर-सरकारी संगठनों की बैठकों में राष्ट्रीय कार्यकारी दल का प्रतिनिधित्व किया और 3 से 8 दिसम्बर, 1990 को गैट सम्मेलन के दौरान विभिन्न प्रतिनिधियों के समक्ष अपना पक्ष रखा ।

कार्यकारी दल ने गैट करार के अन्तिम पाठ के विभिन्नन उपबन्धों के परिणामों की जांच करने के लिए विशेषज्ञ दलों का गठन किया । इन दलों के निष्कर्षों पर विचार करने के लिए 1 जुलाई, 1992 को "गैट वाता के उरूगुए राउंड के समक्ष प्रस्ताव" विषय पर एक विचारोत्तेजक कार्यशाला आयोजित की गई । इस कार्यशाला में भी जाने-माने वैज्ञानिकों, विधि विशेषज्ञों, अर्थशास्त्रियों और समाजसेवी संगठनों के प्रतिनिधियों, श्रमिक संगठनों, उद्योगों के प्रतिनिधियों आदि ने भाग लिया और विशेषज्ञ दलों द्वारा प्रस्तुत किए गए निष्कर्षों पर व्यापक रूप से विचार-विमर्श किया । इस कार्यशाला ने अपने समापन सत्र में एक सर्वसम्मत प्रस्ताव पारित किया ।

डा० नित्यानन्द
अध्यक्ष
पेटेन्ट कानूनों संबंधी राष्ट्रीय कार्यकारी दल

नई दिल्ली
1.7.92

## आर्थिक संप्रभुता बचाए रखने के लिए अपील

हर संवदेनशील भारतीय देश की आर्थिक संप्रभुता के प्रति चिंतित है और महसूस कर रहा है कि हर मोर्चे पर देश का संकट गहराता जा रहा है । इनमें सबसे प्रमुख आर्थिक संकट है और हम, इस वक्तव्य के हस्तारकर्ता, सयुक्त रूप से देश का प्रमुख होने के नाते राष्ट्रपति से और संघीय सरकार के प्रतिनिधि होने के नाते प्रधानमंत्री व उनके सहयोगियों से अपील करते हैं कि वे भारत की स्वतंत्रता, संविधान के सामाजिक- आर्थिक मूल्य, आत्म निर्भरता, औद्योगिक प्रगति और सम्पन्न कृषि के लक्ष्यों को बनायें रखें । इन्हीं लक्ष्यों की खातिर हम सरकार से आग्रह करते हैं कि वे बाहरी दबावों के आगे न झुके ।

हम जानते हैं कि हमारी भुगतान संतुलन की स्थिति, उसके अतिरिक्त कारण चाहे जो रहे हो, गंभीर हैं । लेकिन गांधी की परम्परा और नेहरू की दृष्टि के अनुरूप, एक राष्ट्र होने के नाते हमें जनता को संगठित कर अपनी संप्रभुता पर होने वाले हमले का प्रतिरोध करना चाहिए, भले ही हमें संयम बरतना पड़े या वैभव विलाहसता का पोषण करने वाली आधुनिक सुख सुविधाओं, विदेशी साज सामान और उच्च तकनीक में कटौती करनी पड़े । हो सकता है कुछ समय के लिए कुछ आयातों पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना पड़े और हमें आत्म निर्भर बनने के लिए भारत में निर्मित अपरिष्कृत मशीनों, उपकरणों और उत्पादों से काम चलाना पड़े हमें तेल का आयात कम करके गैस और कोयले का इस्तेमाल बढ़ाना पड़े और ऊर्जा के वैकल्पिक साधन सारे देश में विकसित करने पड़े, ताकि हम विदेशी आयात से मुक्त रहे सकें ।

हमारे पेटेंट कानून, जो देशहित के सिद्धानतों और अन्तर्राष्ट्रीय मानदंडों के अनुरूप बनाये और ढाले गये हैं, संसदीय विवेक की अभिव्यक्ति है । इन पेटेंट कानूनों में अमरीकी हितों की संतुष्टि के लिए फेर- बदल करना हमारी कृषि और उद्योग के लिए घातक हो सकता है । इसलिए हम अपने पेंटेट कानूनों को ' अस्पृश्य ही रहने देने के पक्ष में हैं, क्योंकि यह हमारी अर्थव्यवस्था और हमारे विकास को सुरक्षित करते हैं और उन न्यायपूर्ण नियमों के अनुरूप हैं जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त है । ' हमारे पेटेंट कानूनों से दूर रहिए ' गैट' वार्ता में हमारी उद्घोषणा यही होनी चाहिए ।

संयुक्त राज्य अमेरिका की जनता एवं सरकार से हमारी दोस्ती हमेशा सरगर्म और सद्भावनापूर्ण रही है लेकिन बहुराष्ट्रीय निगम हमारे हितों के विरूद्ध कार्य रते रहे हैं और स्पेशल 301 तथा 301 की तलवार हमारे ऊपर निरनतर लटकाए रखना चाहते हैं । एक राष्ट्र के रूप में हमारे आत्म - सम्मान के लिए यह अपमानजनक है कि हमें प्राथमिक निगरानी सूची या यूँ कहिए कि ' हिट लिस्ट' में रख दिया गया है और इससे भी अधिक शर्मनाक बात यह है कि अमरीका के बड़े व्यवसायियों के स्वार्थ हमसे जा कुछ कराना चाहते हैं उसके पालन के लिए हमें तीन महीने की समय सीमा दी जाती है । यह तो अपमानजनक, चरित्र परीक्षा जैसा है जिसका कि भारत जैसे बड़े देश को विरोध करना ही चाहिए ।

अमरीका प्रवक्ता ने हमारे संदर्भ में जो सुझाव दिए हैं उनमें यह अपेक्षा की गई है कि हम उन सुझावों को राजाज्ञा मानकर शिरोधार्य कर लें और यह हमारीर संप्रभुता के अनुकूल नहीं है । इसलिए हम, जोर देकर सरकार से निवेदन करते हैं कि वह हमारे राष्ट्र की स्थिति को बिना किसी भूल- चूक के स्पष्ट रूप से सामने रखे कि जो कुछ भी किया जाएगा वह व्यवसाय, व्यापार, उद्योग और कृषि या सेवा व्यापार के क्षेत्र में पारस्परिक हितों के दृष्टिकोण से ही किया जाएगा ।

यह सही है कि वित्त मंत्रालय ने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से ऋण लेना पंसन्द किया और उसके लिए अवमून्यन जैसे कदम उठाए जिनका विपरीत असर जनता पर पड़ना शुरू भी हो गया है। मूलभूत आवश्यकताओं के संबंध में वितरणात्मक न्याय का गना घोंटा जा रहा है और पश्चिमी या जापानी हितों के आगे भारतीय हितों के और अधिक समपर्ण से करोड़ों लोगों के लिउ हालात भयानक हो सकते हैं जो अन्ततः अशांति का तूफान खड़ा कस सकते हैं ।

इन संभावित दुष्परिणामों को ध्यान में रखते हुए हम महसूस करते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष या अन्य किसी वित्तीय संस्था की किन्हीं भी ऐसी शर्तो को छिपे या खुले तौर पर स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए जो हमारी आर्थिक संप्रभुता को थोड़ी सी भ क्षति पहुँचाती है । उदारीकरण की वर्तमान नीतियां भले ही आकषक प्रतीत होती हों, लेकिन गहराई में इसके दुष्परिणाम गांधी और पंडित नेहरू की हमारी विरासत और स्वतंत्रता तथा न्यायपूर्ण स्थिर विकास के सम्पूर्ण इतिहास के विपरीत होंगे । इन हालात में हम मांग करते हैं कि संबंधित मसलों पर राष्ट्रीय बहस करायी जा । खास तौर से नीतियों तथा उदारीकरण से मुक्ति के सवालों पर संसद में भी विस्तृत बहस करायी जाए । हम सब सरकार की नीतियों का, जहां तक वे राष्ट्रीय हित में है, समर्थन करते हैं लेकिन हम सरकार को उस जोड़- तोड़ और जोखित भरे कदमो के विरूद्ध चेतावनी भ देना चाहते हैं जो ऐसे समय में, जबकि भारतीय जनता अनेक स्तरों पर अभाव और उपेक्षाओं की कड़ी मार सह रही है, हमारे बजाए किसी दूसरे का हित साधते हैं ।

**हस्ताक्षर कर्ता**

न्यायमूर्ति वी.आर.कृष्णा अय्यर, न्यायमूर्ति इ.एस. वैंकटरमैया, डा. सुरेन्द्र जे. पटेल, पी.एन. हक्सर, न्यायमूर्ति राजिन्द्र सच्चर, एस. मधुसूदन राव, डा. अरूण घोष, आर.सी. दत्त, डा. नित्यानन्द, वंसत साठे, के.आर.नारायणन, डा. मुरली मनोहर जोशी, अटल बिहारी वाजपेयी, लाल कृष्ण आडवाणी, यशवन्त सिनहा, ई.एम.एस. नम्बूद्रीपाद, एम. वासवपुनैया, ई.के.नयनार, ई. बालानन्दन, यू. अच्युतानन्दन, एम.ए. बेबी, इन्द्रजीत गुप्ता, चतुरानन मिश्र, पी. उपेन्द्र, इ.एस. गुलाटी, प्रो. इरफान हबीब, डी.एन.वी. कुरूप, सुब्रत हसन्हा, डा. रजनी कोठारी, खुशवंत सिंह, कुलपदीय नैय्यर, निखिल चक्रवर्ती, प्रो. बी. एम. उदगांवकर, स्वामी अग्निवेश, राजकुमार भाटिया, डा. टी.एन. खोशू, विनय कृष्ण चौधरी, अशोक मित्रा, पी.एन.राय, एम. भट्टाचार्य, बी.आर. नाग, निर्मल कुमार चन्द्रा, तरूण चन्द्र दत्त, एस.के.मुखर्जी ।

## डंकेल ड्राफ्ट

## सरकार प्रदत्त संक्षिप्त विवरण का

## 'नेशनल वर्किंग ग्रुप ऑन पेटेन्ट लॉल ' द्वारा

## विश्लेषण

डंकेल ड्राफ्ट पर एक निश्चित राय बनाने के उद्देश्य से विभिन्न पक्षों की राय जानने के लिए भारत सरकार ने कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को 436 पृष्ठों वाले डंकेल ड्राफ्ट का संक्षिप्त विवरण उपलब्ध कराया था । इस पुस्तक के ( यह विवरण पृष्ठ 14 से 17 पर उपलब्घ है ) जिन लोगों ने डंकेल के मूल ड्राफ्ट का अध्ययन किया है उनका मानना है कि भारत सरकार द्वारा तैयार किये गये संक्षिप्त विवरण में ईमानदारी नहीं बरती गई है । इसी को ध्यान में रखकर हम यहां पेंटेन्ट कानूनों को लेकर विगत कई वषो से कायॆरत ' नेशनल वर्किंग ग्रुप ऑन पेटेन्ट लॉज ' द्वारा सरकार के इस संक्षिप्त विवरण पर किया गया यह विश्लेषण प्रस्तुत कर रहे हैं । संक्षिप्त विवरण पिछले अंक में दिया गया था ।

## कृषि

1. सरकारी संक्षिप्त विवरण का यह बयान अमान्य है कि महानिदेशक के प्रस्ताव में विकाशील देशों के लिए विशेष और अलग व्यवहार किया जाएगा । जैसा हम जानते हैं कि यह अलग व्यवहार सिर्फ विकसित देशों में पिछड़ गये देशों को ही मिलेगा । विकासशल देशों को संक्रमण काम को बड़ा करने के मामले में जरूर कुछ रियायतें मिली हैं, पर इन्हें विशेष और अलग व्यवहार नहीं माना जा सकता, क्योंके ये इन देशों की अलग संरचनात्मक स्थिति को स्वीकार करना भर है यह बात डंकेल प्रस्ताव में नहीं है ।

2. संक्षिप्त, विवरण विकासशील देशों के सन्दर्भ में यह स्पष्ट नहीं करता कि 2003 ई. तक उन सभी विकासशल देशों को घरेलू समर्थन के मामले में 13.3 फीसदी कमी करनी होगी , जहां यह 10 फीस दी से ज्यादा है । इस बयान से इन देशों की सरकारों द्वारा अपने यहां कृषि विकास को प्रोत्साहित करने में साथ बंघ जाने की परेशानी सामने नहीं आती ।

3. विकासशील देशों के बारे में प्रस्तावित अगले अनुच्छेद से भी सरकार के हाथ बंध जाते हैं । कृषि अदानों में सरकार द्वारा सब्सिडी में देने में भी काफी बाधा आएगी और यह किसानों के एक बहुत ही सीमित वर्ग को दिया जा सकेगा । नयी तकनीक को फैलाने पर इसका क्या कुप्रभाव होगा, इसका जिक्र इस अनुच्छेद में नहीं है । अदान पर सब्सिडी में कमी वाले प्रावधान का असर सिर्फ खाद पर ही नहीं, बीज पर दी जाने वाली सब्सिडी पर भी पड़ेगा ।

4. खाद्यानों की कमी न हो या खाद्य सहायता के लिए अनाज की लेबी प्रणाली लागू करने के सरकार के अधिकार को समाप्त करके उसकी भमिका को और कमजोर कर दिया गया है ।

5. आंतरिक बाजार के मामले में डंकेल प्रस्ताव का एक और महत्वपूर्ण पहलू सार्वजनिक वितरण प्रणाली से जुड़ा है । यह पौष्अकता के आधार पर खाद्य सहायता को सीमिते करने की बात करता है, जिसके वलते भारत में जिस तरह की सावेजनिक वितरण प्रणाली से जुड़ा है । यह पोष्टिकता के आधार पर खाद्य सहायता को सीमिते करने की बात करता है, जिसके चलते भारत में जिस तरह की सावेजनिक वितरण प्रणाली है, उसे बंद करना पड़ेगा । संक्षिप्त विवरण डंकेल प्रस्ताव के इस महत्वपूर्ण अंश के बारे में कुद खास नहीं कहता ।

6. यह विरण बाजार तक पहुँच वाले महत्वपूर्ण मामले पर गुमराह करता है । विवरण यह धारणा बनाने की कोशिश करता है कि भुगतान संतुलन वाले प्रावधानों की मदद लेकर भारत बाजार तक पुहँच वाले प्रावधानों की परेशानियों से बच सकता है । लेकिन असल में मात्रा के हिसाब से प्रतिबन्ध लगाने के भुगतान संतुलन वाले प्रावधान में भी गड़बड़ है । इस मामले में डंकेल प्रस्ताव मूल्य आधारित उपायों को मात्रा वाले हिसाब से ज्यादा महत्वपूर्ण मानता है ।

7. कराधान वाले प्रावधानों के अलावा भी बाजार तक पुहॅच बनाने में मौजूदा पहुॅच और न्यूनतम पहुँच के बारे में तय पैमाने भी मददगार हैं । भगुतान संतुलन क आधार पर मौजूदा पहुॅच को , 1986-88 वषो के औसत सालाना आयात या इस दौरान आयात की अनुमति जो भी ज्यादा हो, उससे कम नहीं किया जा सकता । न्यनूतम पहुॅच के अवसर कम या न्यनूतम सीमा शुल्क पर ही उपलब्ध कराने होगें । चूँके भुगतान सुंतलन वाले प्रावधान के आधार पर बचाव इन मौको पर उपलब्ध नहीं होगें, सो परिणाम तबाही लाने वाले हो सकते हैं । सीक्षेप्त विवरण इस मामले में एकदम खामोश है ।

8. कृषि सम्बन्धी सीक्षेप्त विवरण में इस तथ्य को ध्यान में नहीं रखा गया है कि डंकेल प्रस्ताव को कृषि को घरेलू समर्थन के ऐसे मरीकों की अनुमति देता है,जिनका उपयोग विकसित देश कर सकते हैं । क्षेत्रीय अनुदान और ' डिकपुल्ड इनकम सपोर्ट' इसी तरह के अनुदान हैं । कृषि पुनरूद्वार योजना के तहत यूरोपीय समुदाय ने 1986 में ही फैसला कर लिया था कि समुदाय की 58 प्रतिशत जमीन को उपेक्षित क्षेत्र मान लिया जाएगा । इस तरह की मदद के तहत यहां के किसान लागत से कम पर अपनी पैदावार बेच सकते हैं ।

9. सीक्षेप्त विवरण यह नहीं बताता कि डंकेल प्रस्ताव आत्मनिभरता पाने के लिए सरकारी मदद और खाद्य सुरक्षा तथा नियात संवद्धन में सब्सिडी में कोइ अंतर नहीं करता ।

10. सीक्षेप्त विवरण इस तथ्य को नजरअंदाज करके आगे बढ़ जाता है कि डंकेल प्रस्ताव कृषि जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र में हस्तक्षेप कर पाने की किसी सरकार की क्षमता को करीब-करीब समापत ही कर लेता है ।

## ट्रिप्स

1. अनुच्छेद 'ज' में प्रस्ताव की धारा 27 (2) का हवाला देकर यह जताने की कोशिश की गइ है कि डंकेल प्रस्ताव भारतीय पेटेंट कानून 1970 के उस मानक निषेध की व्यवस्था को मान्यता देता है, जिसके तहत सावेजनिक व्यवस्था और नैतिकता - जिसमें मुनष्य, पशु या वनस्पति जीवन या स्वास्थ्य या पयावरण पर गंभीर असर डालने वाले मसलों को अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर रखा गया है । यह सही नहीं है, क्योंके 27वीं धारा में इतना भर कहा गया है कि अगर ये निषेध घरेलू कानूनों द्वारा लाभ लेने भर के लिए हों, तभी यह छूट दी जाएगी । इसका मतलब यह हुआ कि किसी राष्ट्रीय सरकार द्वारा मानक निषेध के तहत कुछ चीजों को पेटेंट कानून के दायरे के बाहर रखने की कोशिश को दूसरे देशों में इन चीजों के पेंटेट होने के आधार पर ठुकराने का रास्ता बचाये रखा जाएगा ।

धारा 27 का साफ मतलब है कि अपनी राष्ट्रीय सावेजनिक व्यवस्था या नैतिकता के पैमानों के आधार पर भारत ने जिन कुछ चीजों को पेटेंट कानून के दायरे से बाहर रखा है, उन्हें भी डंकेल प्रस्ताव पूरी तरह खत्म कर देगा ।

2. अनुच्छेद 'ज' पेटेंट की कार्यप्रणाली, उसकी जब्ती और वापस लेने सम्बन्धी धारा 27(1) के निहितार्थो को भी सामने लाने में असफल है । इस धारा में कहा गया है कि ' आविष्कार के स्थान, तकनीक क्षेत्र और उत्पा आयातित हैं या स्थानीय, यह अंतर किये बिना पेंटेंट अधिकारों का इस्तेमाल हो सकेगा और पेटेंट उपलब्ध होगें । कोई सामान आयात हो रहा है, इस आधार पर कोई सरकार अपने कानून में पेंटेंट सम्बन्धी बदलाव कर लें, ऐसे अधिकार को यह धारा एकदम समाप्त कर देती है । इसका मतलब यह भी हुआ कि पेटेंट रखने वाला देश अगर पेटें पर काम नहीं कर रहा है तो इस आधार पर अनिवार्य लाइसेंस जारी नहीं किये जा सकते । उत्पाद को बाहर से आयात किया जा रहा है, इस आधार पर अनिवार्य लाइसेंस जारी करने को पेटेंट रखने वाले के अधिकारों का उल्लघन माना जाएगा । जिन मसलों पर प्रस्ताव का ट्रिप्स सम्बन्धी विवरण खामोश या अस्पष्ट है, वहां धारा 2 के समारे, पेरिस सम्मेलन के प्रावधान और अधिकार क्षेत्र लागू होगें । इस धारा में कहा गया है ' इस समझोते के भाग 2,3 और 4 के संबंध में सम्बन्धित पक्षों को पेरिस सम्मेलन 1967 की धारा 12 और 19 को मानना होगा । ' पेरिस सम्मेलन मूल रूप से पेटेंट को भी आयात लायक चीज मानता है ।

3. अनुच्छेद 'झ' डंकेल प्रस्ताव द्वारा पेंटेंट की अवधि को कम से कम 20 वषो तक बढ़ाने के प्रस्ताव के निहितार्थो को बताने के मामले में एकदम खामोश है । उत्पाद समबन्धी पेंटेट और साक्ष्य लाने संबंधी जिम्मेदारी बदल देने के प्रावधान के साथ पेटेंट की अवधि बढ़ाने का यह प्रस्ताव स्थानीय जरूरतों के अनुसार ज्ञात तकनीक को अपनाने, उनको स्थानीय स्थितियों के अनुकूल बनाने, स्थानीय ज्ञान को मिलाने और सुधारने सम्बन्धी राष्ट्रीय उद्द्धेयों को भारी चोर करने वाला है । इस प्रावधान के चलते कोई भी देश अपनेदेश का प्रयोगशालाओं और वैज्ञानिकों द्वारा 1970 के बाद रासायनिक पदाथो के मामले में विकसित बेहतर तकनीक और अनुकूल कार्यविधि को नहीं अपना सकता । यह बात खासतौर से दवा और कृषि रसायन क्षेत्रों पर लागू होगी ।

4. अनुच्छेद 'ट' का यह कहना है कि अनिवार्य लाइसेंस के लिए किसी आधार पर प्रस्ताव न करके ऐसे लाइसेंसों के मामले में अपने कानूनों में प्रावधान करने की कुछ आजादी सरकारों को दी गइ हैं । यह सही नहीं है, क्योंकि डंकेल प्रस्ताव पेटेंट की कार्यप्रणाली को परिभाषित और न्यूनतम कीमत पर किसी उत्पाद की उपलब्धता के लिए जरूरी प्रावधानों की कोइ बात नहीं करता । धारा 2 ( (पेरिस सम्मेलन के परिग्रहन ) धारा 28 (पेटेंटधारी करे मिले अधिकार ) और धारा 30 ( मिले अधिकारों के अपवाद ) के निहितार्थो को साथ मिलाने पर धारा 30 सरकार के अनिवार्य लाइंसस नियम बनाने और जारी करने क अधिकार करीब- करीब समाप्त ही कर देती है । धारा 31 की सिर्फ उप-धारा (के) सरकारों को पेटेंटधारी के किसी आचरण को स्वस्थ प्रतिद्वन्द्विता विरोधी घोषित करके एक तरह का (अ-स्वैच्छिक ) लाइसेंस जारी कर सकने की थोड़ी - सी मोहलत देती है । लेकिन यह बात उल्लेखनीय है कि एसी स्थिति में भी पेंटटधारी को दी जाने वाले क्षतिपूर्ति (या पारिश्रमिक) पयोप्त होनी चाहिए । यह पयोप्त है या नहीं, इसका फैसला पेरिस सम्मेलन द्वारा तय नियमों से होगा । 'गैट' के पैनल भी इस पर

फैसला कर सकते हैं । ऐसे में भारत सरकार को पेटेंट की कार्यप्रणाली और प्रतिसंहरण ( रोक लेने) वाले भारतीय पेटेंट कानून 1970 के अध्याय 14 को खतम ही कर देना होगा ।

5. अनुच्छेद 'ट' इस तथ्य को छुपा लेता है कि डंकेल प्रस्ताव की धारा 31 अधिकारों सम्बंधी लाइसेंस जारी करने के सरकारों के हक को समाप्त कर देती है । भारतीय पेटेंट कानून 1970 में दवा, औषधि निर्माण, विज्ञान और खाद्य पदाथो के क्षेत्र में अधिकार सम्बन्धी लाइसेंस देने की व्यवस्था है । साथ ही भारत सरकार द्वारा महत्वपूर्ण समझे जाने वाले पेटेंट होने लायक तकनीक के क्षेत्र में भी अधिकार सम्बन्धी लाइसेंस के अनुमोदन का प्रावधान है । डंकेल प्रस्ताव मानने पर भारतीय पेंटेअ कानून के इन दोनों प्रावधानों को खत्म की देना होगा ।

6. अनुच्छेद 'ट' इस बात के प्रति भ लोगो को सचेत करता कि अ-स्वैच्छिक लाइसेंस किसी पाटी को सिर्फ घरेलू इस्तेमाल की आपूर्ति लायक सामान बनाने के लिए ही जारी होगा । निर्यात के लिए इससे काम नहीं चलेगा ।

7. अनुच्छेद 'ठ' साक्ष्य जुटाने वाले प्रावधान से अब तक की स्थिति बदलने का भारतीय उद्यमी पर पड़ने वाले बोझ को नहीं बताता । बहुराष्ट्रीय नियमों की ताकत और साधन के परिप्रेक्ष्य में भारतीय आविष्कारक द्वारा वैकल्पिक प्रणाली विकसित करने के महत्व को समझने की जरूरत है । अब बहुराष्ट्रीय निगमों के हाथों में ऐसे सर्वोच्च अधिकार को सौंप देना देसी तकनीक को बढ़ावा देने की नीति का मजाक ही बनाएगी । अकराड ट्रेड एण्ड डेवलपमेन्ट रिपोर्ट 1991 के अनुसार साक्ष्य जुटाने की जिम्मेवारी बदलने से छोटे और मध्यम स्तर के उद्यमियों की कीमत पर पेटेंटधारी की ताकत अन्यायपूर्ण ढंग से काफी बढ़ जाती है । यह कहा जा सकता है कि साक्ष्य जुटाने की जिम्मेवारी पेटेंट उल्लघन का अरोप लगाने पर ही होना कई मामलों में ठीक नहीं था, जहां प्रांसगिक तथ्यों तक उसकी पहुँच की मुश्किल है । लेकिन ऐसे मामलों में प्रथमदृष्टया मामला बन जाने के बाद अदालतों को साक्ष्य संबंधी जिम्मेवारी दूसरे पक्ष पर डालने का अधिकार है । भारतीय साक्ष्य कानून में सबूतों संबंधी प्रस्तावों में इसके अलग से प्रावधान रखने का समर्थन कने की जगह इसकी पेयावंदी करते हैं । इस संदर्भ में यह जानना दिलचस्प होगा कि क्या भारतीय अदालतों द्वारा किसी भी पेटेंटधारी को न्याय न मिल पाने का एम भी मामला है । मौजूदा स्थिति के अनुसार ऐसा नहीं हुआ है । इसलिये यह कहा जा सकता है कि साक्ष्य जुटाने सम्बन्धी उत्तरदायित्व बदलने का डंकेल प्रस्ताव का प्रावधान मुख्यतः भारतीय उद्यमियों को परेशान करने वाली मुकदमेंबाजी में उलझाने के लिए ही है और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और तकनीकी लक्ष्यों के हिसाब से एकदम उपयोगी नहीं है ।

8. अनुच्छेद 'त' इस बात को सामने लाने में असफल है कि ट्रिप्स सम्बन्धी प्रस्ताव विकासशील देशों के तकनीकी विकास के निम्न स्तर को देखते हुए उन्हें किसी तरह की विशेष और अलग सुविधाएं देने की बात नहीं करता । यह सिर्फ संक्रमणकालीन व्यवस्था करता है । विभिन्न सरकारों को ट्रिप्स के प्रावधानों के अनुरूप अपने राष्ट्रीय कानूनों में बदलाव कर लेने का एक समयबद्ध कार्यक्रम । भारत जैसे विकासशील देशों को यह बदलाव करने के लिए दस वर्ष कस समय दिया गया है । लेकिन यही प्रस्ताव अपनी 65वीं धारा की उपधारा ∮4 और 5 ∮ के जरिए संक्रमणकालीन लाभों को भी वापिस ले लेता है । ऐसा पाइप लाइन प्रोटेशन के नाम पर हुआ है । इसके अनुसार विकासशील देशों को 2003 इ में रक्षण के लिए जनवरी 1993 से ही अपने कानूनों से बाहर रखे गये मामलों से संबंधित आवेदन लेने होंगें । दूसरे शब्दों में यह दावा बिल्कुल गलत है कि ट्रिप्स संक्रमणकालीन प्रावधान भारत के लिए किसी किस्म की रियायत है । जैसा कि सभी जानते हैं कि दवा कंपनियों खुद भी कहती रही है कि पेटेंट दर्ज कराने के बाद दवा तैयार करके बाजार तक पहुँचाने में आठ से दस वर्ष का समय लग जाता है । इसका मतलब है कि उन्हें 2003 ई. से आगे के लिए ही संरक्षण की जरूरत होगी जिसे भारत अभ्भ बांटने लगेगा । इस प्रसतावित संक्रमणकालीन व्यवस्था का एक और असर तकनीक के क्षेत्र में होगा । जहां 2003 ई. के लिए 1993 से ही अर्जियां ली जाएंगी और ऐसे में कोई भी स्थानीय उद्यमी इन जोखिम भरा निवेश नहीं करेगा । सार्वजनिक अनुसंधान और विकास की अनेक चालू परियोजनाओं को बीच में ही छोड़ना पड़ेगा । दूसरे शब्दों में 1993 से ही सरकार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और तकनीकी लक्ष्यों के मामले में हानिकारक समझौते शुरू कर देगी ।

## ट्रिम्स

1. सरकारी संक्षिप्त विवरण के गैट नियमों सम्बन्धी अनुच्छेद 4 के उप - अनुच्छेद 'ज' में ट्रिप्स का जिक्र है । डकेंल प्रस्ताव में इस बात का प्रावधान किया गया है कि विदेशी निवेशक को राष्ट्रीय जैसा व्यवहार मिलना चाहिए । इसका मतलब हुआ कि गैर-उच्च तकनीकी वाले उन सभी क्षेत्रों को जो अभी तक सिर्फ देसी कम्पनियों के लिए खुले हैं, विदेशी कम्पनियों के लिए भी खेलना होगा । और फिर उनकी स्वाभाविक पंसद का क्षेत्र होगा । अधिक मुनाफा देने वाले स्थायी उपभोक्ता वस्तुओं का कारोबार । साथ ही वे ऐसे इलाकों को भी पंसद करेंगें जिनमें कम पूंजी से तेज और ज्यादा कमाई की जा सकती है । ये अधिकांश क्षेत्र गैर- जरूरी चीजों के ही होगें । मात्रा सम्बन्धी पाबन्दियां हटाने का मतलब होगा कि राष्ट्रीय सरकारें उद्यमों की क्षमता और निवेश के मामले में किसी भ तरह का हस्तक्षेप नहीं कर सकेंगी ।

2. सरकारी संक्षिप्त विवरण में यह भी कहा गया है कि इस समझौते में कोई भी नई बाध्यता या निर्यात की मजबूरी नहीं जोड़ी जाएगी । लेकिन ट्रिम्स वाले प्रस्तावों के बाद दी गई

सूची से लगता है कि विदेशी निवेशकों पर किसी किस्म की बाध्यता नहीं होगी । इसी प्रकार कच्चे माल, पुजो वगैरह के आयात पर भी कोई रोक नहीं होगी । ऐसी अनिवार्यताएं न होना राष्ट्रीय हित में नहीं है । लेकिन इस मसले पर सरकारी संक्षिप्त विवरण आमतौर पर खामोशी धारण किए हुए है ।

**सेवा क्षेत्र**

1. सेवा क्षेत्र में व्यापार सम्बन्धी अनुच्छेद (6) कहता है कि सेवा के सभी क्षेत्रों में एकमात्र महत्वपूर्ण बात सर्वाधिक पंसद राष्ट्र वाला व्यवहार ( मोस्ट फेवर्ड नेशन ट्रीटमेन्ट -एम.एफ.एन.) और पारदर्शिता का है । यहां सेवा क्षेत्र वाली विदेशी कम्पनियों को प्रवेश देने या राष्ट्रीय कम्पनियों के बराबर व्यवहार देने की बात कही गई है । यह सारा कुछ बातचीत और मोल- भाव से तय होना है । डंकेल ने सुझाव दिया है कि इन क्षेत्रों में बेहतर स्थिति बनाने के लिए अगले कुछ हफ्तों में बातचीत होनी चाहिए । इस बारे में भारत सरकार द्वारा अब तक की गई पहल के मद्देजनर यह कहना गलत नहीं होगा कि देश सेवा के सभी क्षेत्रों में वह विदेशी उद्यमों के पहुँचने का रास्ता बना रही है ।

2. इस अनुच्छेद में इस बात का भी उल्लेख नहीं है कि डंकेल प्रस्ताव ने सेवा क्षेत्र के विवाद को भी गैट के विवाद निपटारे वाली व्यवस्था के अन्दर रखा है और इसमें बदले की उल्टी कार्यवाही का शिकार भी होना पड़ सकता है ।

3. अनुच्छेद (6) डंकेल प्रस्ताव के पारदर्शिता वाले प्रावधान को मानने के नतीजों के बारे में कुछ भी नहीं बताता ।

   धारा (8) के अनुसार, सभी प्रासंगिक कानूनों, नियमों, प्रशासनिक निदेशों और ऐसे सारे फैसलों को, जिन्हें राष्ट्रीय या उप-राष्ट्रीय सरकारी संस्थाएं या गैर - सरकारी नियमन एजेंसियों लें, तथा जिनका समझौते के कामकाज से कोई भी लेना- देना हो, तत्काल प्रकाशित कराया जाना चाहिए । इस समझौते के किसी एक पक्ष को प्रभावित करने वाले अंतरराष्ट्रीय समझौतों को भी प्रकाशित करना होगा । सिर्फ ये सूचनाएं ही नहीं देनी होगी, बल्कि हर साल नियम- कानूनों में होने वाले उस किसी भी बदलाव के बारे में जानकारी देनी होगी, जिसका असर सेवा में व्यापक पड़ेगा । इसका सीधा - सा मतलब यह हुआ कि राष्ट्रीय सरकारों को तो अपने नियमों कानूनों में बदलाव, फेरबदल करने होगें , पर बहुराष्ट्रीय निगमों के व्यावसायिक हित पूरी तरह सुरक्षित होंगे और उन्हें अपनी व्यापारिक गोपनीय सूचनाएं कहीं भी जाहिर करने की बाध्यता नहीं होगी ।

4. उत्तरदायित्व वाली धाराओं का कोई खास मतलब नहीं है । सारे विवाद गैर-पैनल प्रणाली से ही निपटाये जायेंगे, जिसका अर्थ होगा कि निरन्तर बदले की धमकी के आगे तीसरी दुनिया के देश अपने हितों को बचाने की कोशिश करते रहेंगे ।

5. सेवाओं के क्षेत्र में व्यापार सिर्फ देशों के बीच व्यापार नहीं है, यह घरेलू सेवाओं को भी प्रभावित करता है और निश्चित रूप से राष्ट्रीय हितों के अनुरूप नहीं होता । सार्वजनिक हित में किसी भी क्षेत्र में दखल देने को सेवा के व्यापार में उदारता में दखलअंदाजी माना जाएगा । धारा 5 ( आर्थिक एकीकरण) सभी तरह के अंतर (1) मौजूदा और (2) भविष्य के भी, वाले प्रावधानों को खत्म करने की बात करती है । उत्पादन, बिक्री और विपणन - सभी को समाहित करने वाली सेवाओं का व्यापार विपणन में हो सकने वाली गड़बड़ियों के बारे में स्पष्ट नियमों से लैस होना चाहिए । लेकिन 'गैट' के प्रावधान इस बारे में एकदम चुप्पी साधे हुए है ।

7. सेवाओं के क्षेत्र में व्यापार सम्बन्धी अनुच्छेद (6) स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में हो सकने वाली गड़बड़ियों पर कोई विचार नहीं करता । जैसे कि अगर स्वास्रू सेवाओं में भी विदेशी मुनाफा कमाने वाली कम्पनियों को आने की इजाजत दे दी गई तो क्या वे बुनियादी स्वास्थ्य सेवाएं या सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को भी सम्भालेंगी या ऐसी देसी चिकित्सा प्रणाली के विकास की तरफ हम अग्रसर हो पायेंगे जो इलाज के साथ ही सांस्कृति ओर आर्थिक रूप से से भी हमारे अनुकूल बैठे । अंदेशा इसी बात का है कि हमारे लोगों के स्वास्थ्य एवं पौष्टिकता वाले हिसाब में बहुत सुधार की जगह, मौजूदा गड़बड़ियों और विसंगतियां बड़ी होती जाएंगी । शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय निगमों के कामकाज से होने वाले नुकसान के खिलाफ हमारे लोग लड़कर कुछ हासिल कर पायेंगे , यह दिवास्वप्न ही है । अभी तक विश्व स्वास्थ्य संगठन में भी, जहां हर देश के पास एक वोट है, दुनिया भर में एक जैसी व्यापार प्रणाली के सही पैरोकार लोग तम्बाकू, शिशु आहार और दवा का करोबार करने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की बेईमानी भ्र विपणन प्रणाली के खिलाफ न्यनूतम पाबन्दियों वाले नियम की घोषणा का विरोध करते रहे हैं । 1980 में जब 35वीं विश्व असेम्बली ने दवाओं के तार्किक उपयोग सम्बन्धी एक कठोर प्रस्ताव पास किया तो अमरीका ने विश्व स्वास्थ्य संगठन के बजट में दिया जाने वाला अपना 25 फीसदी हिस्सा देना रोकने की धमकी दी थी । तब अमरीका ने कहा था कि हर देश को अपने बारे में खुद फैसला करना और नियम बनाना चाहिए । विश्व स्वास्थ्य संगठन कोई ' सुपर- नेशनल' संस्था नहीं है। आज गैट एक सुपर-नेशनल संस्था है बनकर तीसरी दुनिया के देशों से उनके यहां के वे क्षेत्र भी जबरन खुलवा रही है, जिन्हें इन देशों ने अपने राष्ट्र के उद्यमियों कलए संरक्षित रखा था । विश्वजीत सेवाओं के व्यापार में उदारीकरण वगैरह को मौजूदा सामाजिक परिप्रेक्ष्य के अन्दर ही देखना चाहिए ।

7. भारी आर्थिक मुश्किलों वाले देश, में जहां गरीबों का जीवन मुश्किल है, कम कीमत वाले विकल्पों का खत्म होना आत्मघाती ही होगा । 'गैट' को मानने का मतलब खुद को बड़ी ताकतों के आगे मजबूर करना और अपनी मौजूदा बदहाली को और बढ़ाना है । सेवाओं सम्बन्धी डंकेल प्रस्ताव अमीर देशों के धूर्त लेखकों द्वारा तैयार जटिल शब्दार्थयुक्त कानूनी दस्तावेज है । इस पर कोई टिप्पणी करने से पहले इसकी काफी सारी बातों का गूढ़ार्थ जान लेना जरूरी है ।

## गैट धाराएं

1. सरकार द्वारा तैयार संक्षिप्त विवरण यह बात नहीं बताता कि अपनी भुगतान संतुलन सम्बन्धी परेशानियों से निपटने के निए मात्रात्मक पाबन्दियों वाली गैट की धारा 17 बी डंकेल प्रस्ताव से एकदम बेमानी हो गइ है । विकासशील देशों ने हाल के वषों में भुगतान सुतुलन का जबरदस्त संकट झेला गया है । ऐसी स्थिति में इन्हें इस स्थिति से पार पाने वाले कदम उठाने की जरूरत है । लेकिन प्रस्तावित डंकेल मसौदा उन्हें ऐसा नहीं करने देगा ।

2. संक्षिप्त विवरण इस बात को भी नजरअंदाज कर देता है कि गैट ने विकासशील देशों के लिए विशेष और अलग व्यवहार के जो प्रावधान रखे हैं, उन्हें भी डंकेल प्रस्ताव बहुत हद तक खत्म कर देता है । राष्ट्र संघ द्वारा चिहिनत कम विकसित देशों के लिए विशेष दर्जा वापस लेने से विश्व व्यवस्था में असमान भागीदार - विकसित और विासशील देशों के बीच बराबरी का मुकाबला ही होगा ।

## संस्थागत

1. अुच्छेद (क) के अनुसार विवाद निपटारे के कानून समयबद्ध स्व-संचालित और न्यायपूर्ण नजरिए वाले बना दिये गये हैं । इससे यह इंगित होता है कि यह बाद भारत जैसे देशों के हक में है । यह इस मसले को बाकी चीजों से काटकर देखने की दृष्टि लगती है और इस बात को भुला दिया गया लगता है कि डंकेल प्रस्ताव के अधीन बौद्धिक सम्पदा अधिकार, निवेश संबंधी प्रावधान और सेवाओं से महत्वपूर्ण क्षेत्र भ्भ आते हैं । लेकिन जैसे ही इस बात पर गौर किया जाता है कि ये नियम स्वायत आर्थिक क्षेत्रों के मामले में है, विवादों का निपटारा गैट सचिवालय द्वारा नियुक्त पैनल करेगें । और इनके अनुसार बदले की कार्यवाही की अनुमति होगी तो यह साफ हो जाता है कि ' समयवद्ध स्व - संचालित और न्यायपूर्ण नजरिया असल में विकसित देशों के हक में झुका हुआ है । संक्षेप में कहें तो नयी विवाद निपटारा प्रणाली का मतलब विकसित देशों द्वारा स्वायत अधिकारों को प्रभावी ढंग औ जल्दी से दबा देना ही है ।

2. एकतरफा बदले की कार्यवाही करने वाले घरेलू कानून रखने वाले देशों के लिए भी इस नई विवाद निपटारा प्रणाली में प्रावधान है, यह दावा भी खोखला है । जब अमरीका जैसे विकसित देशों के हितों को बचाने के लिए ट्रिप्स, ट्रिम्स , गैट जैसे व्यापक प्रावधान हैं ही तो फिर एक तरफा बदले की कार्यवाही की क्या जरूरत है । गैट के मौजूदा कानून बौद्धिक सम्पदा सम्बन्धी अधिकार के बारे मे कुछ नहीं कहते । इसी के चलते बदले की कार्स कारूवाही करने कीउजरूरत भी है । पयाप्त संरक्षण की मांग पूरी होने और सामूहिक बदले की कार्यवाही का कानूनी प्रावधान हो जाने के बाद एकतरफा कार्यवाही की जरूरत ही नहीं रहेगी । जब बहुराष्ट्रीय प्रणाली द्वारा अपने हितों की रक्षा हो ही जाए तो कोइ देश क्यों अकेले कार्यवाही करेगा ? अब अंतराष्ट्रीय कानून के भी अपने पक्ष में आ जाने से यह काम आसानी से हो जाएगा । सबसे बुरी बात

यह है कि डंकेल प्रस्ताव अब सभी विकसित देशों को बदले की कार्यवाही करने का अधिकार देता है । इस प्रकार इसने सुपर 301 के प्रावधान को विश्वजनीन बना दिया है ।

3. अनुच्छेद (ग) में कहा गया है कि 'गैट' और 'ट्रिप्स) का अलग- अलग वैधानिक दर्जा होगा । यह बयान बेमतलब है, क्योंकि बदले की कार्यवाही को मान्यता दे दी गयी है । साथ ही यह भी कहा गया है कि डंकेल प्रस्ताव पूरे तौर पर पास होने के लिए रखा गया है । अगर विभिन्न देश अपने हितों के अनुसार 'गैट' और 'ट्रिप्स' पर अलग- अलग समझौते करने को आजाद हों, तभी इन दोनों के अलग वैधानिक दर्जे के दावे को कोई मतलब है । लेकिन यह विकल्प है ही नहीं । बदले की कार्यवाही का प्रावधान अलग- अलग समझौतों के अलग वैधानिक दर्जे की बात को पूरी तरह बेमानी कर देता है ।

4. अनुच्छेद (ग) में दावा किया गया है कि सामूहिक बदले की कार्यवाही को अंतिम अस्त्र के तौर पर रखा गया है, साथ ही बचाव के अनेक उपाय भी किये गये हैं । यह दावा एकदम अविश्वसनीय है, क्योंकि कुछ ऐसे क्षेत्र थे, जिनमें एक देश की कार्यवाही से बहुत असर नहीं होता । इसलिये विकसित देशों ने सामूहिक कार्यवाही पर जोर दिया । दूसरे शब्दों में यह अंतिम अस्त्र नहीं, पहला ही हथियार है । साथ ही यह प्रावधान भ- है कि अगर एक खास क्षेत्र या समझौते की गडबड़ के बाद बदले की कार्यवाही ही जा रही है और यह प्रभावी अॆौर व्यावहारिक नहीं पा रहा है । तो बदले की कार्यवाही दूसरे चेत्रों और समझौतों में भी की जा सकती है । व्यावहारिक और प्रभावी ऐसे शब्द है जो व्यवहारतः हर स्थिति में कामयाब ही रहेगें ।

# डंकेल प्रस्ताव का संक्षिप्त विवरण

गैट के महानिदेशक आर्थर डंकेल के प्रस्ताव पर भारत सरकार को अपनी राय जनवरी के मध्य तक देनी थी। लेकिन बाद में उसने यह अवधि बढ़ा ली। भारत सरकार ने डंकेल प्रस्ताव पर अपनी निश्चित राय बनाने के उद्देश्य से अन्य पक्षों की राय जानने के लिए उन्हें 436 पृष्ठ वाले डंकेल ड्राफ्ट का संक्षिप्त विवरण उपलब्ध कराया, ताकि अन्य पक्ष इस विवरण के आधार पर भारत सरकार को अपनी प्रतिक्रिया से अवगत करा सकें। कुछ ऐसे लोगों का, जिन्होंने भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत कराये गये संक्षिप्त वर्णन के साथ-साथ मूल प्रस्ताव को भी पढ़ा है, मानना है कि यह संक्षिप्त वर्णन ईमानदारी से तैयार नहीं कराया गया है। इसमें मूल प्रस्ताव की सभी बातें शामिल नहीं हैं और अनेक बातों की गंभीरता को कम करके आंका गया है। इस मसले पर न उलझा जाय तब भी संक्षिप्त विवरण डंकेल प्रस्ताव की उस नियति को साफ-साफ दर्शाता है, जो भारत जैसे विकासशील देशों के हितों के विरुद्ध जाती है।

यहां हिन्दी में प्रस्तुत यह संक्षिप्त विवरण, समता प्रकाशन दिल्ली द्वारा प्रकाशित 'गुलामी का खतरा' पुस्तक से लिया गया है।

## सरकार द्वारा तैयार संक्षिप्त विवरण

बहु-देशीय व्यापार वार्ता की उरुग्वे दौर की बातचीत सितंबर 1986 में उरुग्वे के पुंटा डेल इटे में मंत्री-स्तरीय बैठक से शुरू हुई। यह बातचीत अपने विषय क्षेत्र के चलते अभी तक हुई 'गैट' बैठकों से अलग थी। पहले की बैठकों में वस्तु व्यापार के कर और कर भिन्न मामलों पर ही चर्चा होती थी, पर उरुग्वे दौर की वार्ता में विभिन्न सेवाओं के व्यापार, बौद्धिक संपदा अधिकार के व्यापार पहलू (ट्रेड रिलेटेड आस्पेक्ट्स ऑफ इंटेलेक्चुअल प्रौपर्टी राइट्स-ट्रिप्स) और निवेश के पहलुओं संबंधी व्यापार (ट्रेड रिलेटेड इन्वेस्टमेंट मेजर्स-ट्रिम्स) भी शामिल थे। इस वार्ता की एक विशेष बात इसमें भाग ले रहे देशों द्वारा कृषि के व्यापार में उदारता लाने के मामले में प्रगति की कोशिश थी। यह पूरी बातचीत दिसंबर, 1990 तक ही समाप्त हो जानी थी, लेकिन प्रमुख औद्योगिक देशों के बीच कृषि व्यापार के मामले में मतभेद रहने के चलते ऐसा नहीं हो सका।

20 दिसंबर, 1991 को समाप्त वार्ता के नवीनतम दौर में विश्व व्यापार को उदार करने की सीमा और भविष्य में राष्ट्रों के बीच व्यापार संबंधों को चलाने वाले व्यापार नियमों के मसले में मतभेद को दूर करने की गंभीर कोशिश की गई, जिनको लेकर वार्ता में भाग ले रहे 108 देशों में खेमेबंदी हो गयी थी। परिणामस्वरूप कई मसलों पर मतभेद काफी कम हुए, पर कई विषयों पर मतभेद बना रहा। कृषि व्यापार, कपड़ों के व्यापार, जरूरत से ज्यादा माल डालने के खिलाफ नियम और बौद्धिक संपदा अधिकार (ट्रिप्स) जैसे महत्वपूर्ण मसलों पर मतभेद रहे। इस जिच को तोड़ने के लिए 'गैट' के महानिदेशक और व्यापार वार्ता कमेटी के अध्यक्ष श्री आर्थर डंकेल ने वार्ता में शामिल देशों की सरकारों के विचार करने के लिए एक प्रस्ताव तैयार किया। श्री डंकेल द्वारा रखे इस 436 पृष्ठों के प्रस्ताव में अब तक की वार्ता में हुई सफलता को दर्ज किया गया है और ऐसे क्षेत्रों के लिए सुझाव दिये गये हैं, जिनमें मतभेद के चलते वार्ता में जिच पैदा हो गयी है। श्री डंकेल ने इन देशों से आग्रह किया था कि वे 13 जनवरी, 1992 से शुरू हो रही व्यापार वार्ता कमेटी की बैठक में अपनी राय भेज दें। भारत सरकार डंकेल प्रस्ताव के विभिन्न पहलुओं को जांच-परख रही है और यह काम अभी तक समाप्त नहीं हुआ है। जेनेवा स्थित भारतीय प्रतिनिधि से कहा गया है कि वे व्यापार वार्ता कमेटी को सूचित कर दें कि हम अपनी पक्की राय देने में थोड़ा और समय लेंगे।

यह संक्षिप्त विवरण श्री डंकेल के प्रस्तावों की मुख्य बातों को बताता है। वार्ता सात मुख्य क्षेत्रों को समेटती है, जो इस प्रकार है : बाजार तक पहुंच, कृषि, वस्त्र, ट्रिम्स समेत 'गैट' के नियम, ट्रिप्स, सेवाओं का व्यापार और संस्थागत मसले। इन्हीं सात शीर्षकों के तहत डंकेल प्रस्ताव की मुख्य बातें यहां उल्लेखित हैं

## बाजार तक पहुंच

पिछले पांच वर्षों की बातचीत वस्तु व्यापार में सीमा शुल्क और कर भिन्न बाधाओं को कम करने की रही है। वार्ता सभी वस्तुओं पर सीमा शुल्क में कमी पर हो रही है, पर कुछ देशों के गुट अपनी दिलचस्पी वाली वस्तुओं, वनोपज, प्राकृतिक संसाधन आधारित माल, कृषि उत्पाद, वस्त्र वगैरह पर सीमा शुल्क की दरें न्यूनतम करा लेना चाहते हैं। 1992 के पहले दो महीनों में सीमा शुल्क और कर भिन्न मसलों को दुतरफा, बहुपक्षीय बातचीत से सुझला लेने का सुझाव देने के अलावा श्री डंकेल ने कोई और प्रस्ताव नहीं किया है। पहले भारत समेत अनेक देशों ने सीमा शुल्क में कमी का सशर्त प्रस्ताव रखा था और अगले कुछ हफ्तों में होने वाली वार्ता में भी वे लोग कोशिश करेंगे कि उनका प्रस्ताव संतुलित रहे। उल्लेखनीय है कि भारत ने कच्चे माल, अर्द्ध निर्मित चीजों और पूंजीगत वस्तुओं पर सीमा शुल्क में 30 प्रतिशत तक कटौती का प्रस्ताव किया है।

## कृषि

कृषि व्यापार के मामले में 'गैट' के मौजूदा कानून सब्सिडी और परिमाणात्मक प्रतिबंधों के लायक पर्याप्त अनुशासन रखने में समर्थ नहीं हैं। इसका लाभ लेते हुए औद्योगिक देश अपनी कृषि को भारी सब्सिडी के सहारे चला और बचा रहे हैं। परिणामस्वरूप शीतोष्ण क्षेत्र में कृषि उत्पादन और व्यापार गड़बड़ा गया है। अन्न, डेयरी उत्पादों, मांस, चीनी, तेलहन वगैरह में होड़ लगाकर सब्सिडी देते चले जाने से इन चीजों का अंतरराष्ट्रीय मूल्य अनेक वर्षों से मंदा ही चल रहा है, जिससे इन चीजों का कुशलतापूर्वक उत्पादन कर रहे देशों को व्यापार का मौका नहीं मिल पा रहा है। उरुग्वे

दौर की वार्ता का केन्द्र कृषि व्यापार और उत्पादन संबंधी औद्योगिक देशों की नीतियां ही थीं। सभी औद्योगिक देश सब्सिडी और संरक्षण हटाने पर सहमत थे, पर आखिर तक इस कमी की सीमा को लेकर मतभेद था।

कृषि नीतियों में सुधार संबंधी महानिदेशक के प्रस्तावों का जोर विकासशील देशों के प्रति विशेष और अलग व्यवहार पर है। सामान्य प्रयोग के लिए ये प्रस्ताव है:

(क) कुछ उपायों (जिन्हें कम कुप्रभाव वाला मानकर छोड़ दिया गया है) को छोड़कर खेतिहर लोगों को दी जाने वाली सभी घरेलू मदद की सीमा 1993 से 1999 के बीच 20 फीसदी तक कर दी जानी चाहिए।

(ख) प्रत्यक्ष अनुदान की तरफ दी जानेवाली निर्यात सब्सिडी को 1993 से 1999 के बीच बजट प्रावधान और मात्रा में क्रमशः 36 प्रतिशत और 24 प्रतिशत तक लाना होगा।

(ग) कराधान में व्यापक फेरबदल करने होंगे। इस फेरबदल के साथ ही सामान्य सीमा शुल्क में 1993 से 1999 के बीच औसत 36 प्रतिशत कमी करनी होगी और हर चीज पर सीमा शुल्क में कम-से-कम 15 प्रतिशत कमीं लानी होगी।

विकासशील देशों के लिए प्रस्तावों में इन विशेष व्यवहारों पर जोर दिया गया है:

(क) अलग-अलग कृषि उत्पादों पर कुछ समर्थन का स्तर 10 फीसदी तक ही होगा। उन पर कमी करने को नहीं कहा जाएगा।

(ख) कम आय वाले और संसाधनों के मामले में कमजोर किसानों को खेती में निवेश और खेती के लिए जरूरी आदान पर दी जाने वाली सब्सिडी को सब्सिडी में कटौती की आय सीमा से बाहर रखा जाएगा।

(ग) इन सबके अलावा, भुगतान सन्तुलन संबंधी पाबंदियों वाले विकासशील देशों (जैसे कि भारत) को कर-भिन्न मामलों को सीमा शुल्क के दायरे में लाने की कोशिश से बाहर रखा जाएगा। साथ ही इन देशों को करों के मामले में ऊपरी सीमा तय करने की सुविधा होगी।

## कपड़े और पोशाक

कपड़े और पोशाक के मामले में विश्व व्यापार मल्टी-फाइबर एरेंजमेंट (एम.एफ.ए.) से संचालित होता है, जिसमें माल आयात करने वाले देश को 'गैट' के सामान्य नियमों की उपेक्षा करके आयात पर पाबंदियां लगाने की सुविधा रहती है। कम मजदूरी के चलते अपने माल को सस्ते दर पर निर्यात करने वाले देश के माल पर रोक लगाने की सुविधा 'एम.एफ.ए.' देता है। कपड़ों के मामले में 'गैट' के महानिदेशक के प्रस्ताव में यह बातें शामिल हैं:

(क) सन् 1993 से 2002 के दस वर्षों की अवधि में 'एम.एफ.ए.' को चरण बद्ध ढंग से खत्म कर दिया जाएगा। 1 जनवरी 2003 से कपड़ा और पोशाक भी 'गैट' में जुड़ जाएगा और इसकी सारी पाबंदियां समाप्त हो जाएंगी।

(ख) यह 10 साल का समय तीन चरणों 3:4:3 में बंटा होगा। पहले चरण के पूरा होने पर 1990 के कुल आयात का 16 फीसदी हिस्सा 'गैट' के नियमों के अधीन आ जाएगा। दूसरे और तीसरे चरण में क्रमशः 17 और 18 फीसदी आयात गैट से जुड़ेगा। इस प्रकार 1 जनवरी, 2000 तक 51 फीसदी आयात 'गैट' के तहत आ जाएगा और शेष 49 फीसदी 1 जनवरी, 2003 तक जुड़ेगा। इस प्रकार पहले सात वर्षों में प्रभावी जुड़ाव कम है। एक बार में देखने पर जो स्थिति दिखती है, संभव है यह उससे भी कम संतोषजनक हो, क्योंकि पहले दो चरणों में (1993-1999) यूरोपीय आर्थिक समुदाय और अमेरिका, जो हमारे दो मुख्य बाजार हैं, अगर चाहें तो भारत से होने वाले आयात को इसके तहत जोड़कर यह लक्ष्य हासिल कर लेंगे, क्योंकि यहां के आयात में अभी कोई परेशानी नहीं है।

## ट्रिम्स समेत 'गैट' के नियम

नियम बनाने वाले मामले में भाग लेने वाले देशों में इस बात पर काफी सहमति थी कि बिना भेदभाव वाले सिद्धांतों के प्रति फिर से निष्ठा जाहिर करके और कर-भिन्न मामलों में सरकारों द्वारा मनमानापन करने के अंदेशे को हटाने तथा मौजूदा गड़बड़ियों को दूर करते हुए बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली को बचाया और मजबूत किया जाए। साथ ही विकासशील देश चाहते थे कि आयात की मात्रा और निर्यात सब्सिडी जैसे व्यावसायिक नीति उपकरणों के उपयोग के मामले में उन्हें ज्यादा आजादी दी जाए। माल को किसी देश में ले जाकर सस्ता बेचने और बचाव समझौते के एक पहलू को छोड़कर नियम बनाने वाले हर क्षेत्र में सहमति कायम हो गयी। श्री डंकेल द्वारा तैयार प्रस्ताव की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं:

(क) किसी देश में सस्ता माल भरते जाने के क्रम को तब तत्काल बंद कर दिया जाएगा, जब वहां के अधिकारी पाएंगे कि किसी एक देश का माल कुल घरेलू बाजार के ढाई फीसदी और एक खास माल एक फीसदी तक हो गया है।

(ख) बराबर कराधान के मामले में प्रगतिशील देशों को जांच से मुक्त कर दिया गया है, बशर्ते सब्सिडी वाले आयात की मात्रा कुल आयात के 4 फीसदी से कम हो और सकल आयात में ऐसी कुल आपूर्ति की मात्रा 9 फीसदी तक न आ जाती हो।

(ग) लगातार दो वर्षों तक एक खास चीज के निर्यात में कुल विश्व व्यापार के 3.25 प्रतिशत तक हिस्सा पा लेने वाले ऐसे देशों पर निर्यात सब्सिडी हटाने की बाध्यता नहीं रहेगी, जिनकी प्रति व्यक्ति सालाना आय 1000 डॉलर से कम हो। वस्तु की परिभाषा तय करना भी महत्वपूर्ण है। अभी विश्व व्यापार में भारत सिर्फ हीरे और गहनों के मामले में ही 10 फीसदी हिस्सा रखे हुए है। शेष चीजों का निर्यात इस तय सीमा से नीचे ही है।

(घ) पहले निर्यात के लिए तैयार होने वाले सामान में लगने वाले कच्चे माल पर लगने वाला अप्रत्यक्ष कर वापस हो जाता था। अब इस वस्तु के उत्पादन में खप

जाने वाली ऊर्जा, ईंधन, तेल और उत्प्रेरक जैसी चीजों पर लगा कर भी वापस हो जाएगा।

(च) स्वैच्छिक निर्यात नियंत्रण और अनुशासित विपणन व्यवस्था जैसे सुरक्षात्मक उपायों पर रोक लगा दी गयी है। घरेलू उद्योग को गंभीर नुकसान होने से बचाने के लिए बिना भेदभाव रोक लगाने की व्यवस्था को माना गया और कुछ मामलों में इसे समाप्त भी किया गया है। अगर किसी विकासशील देश के आयात का हिस्सा 3 फीसदी से ज्यादा न हो, तो ऐसे सुरक्षात्मक उपाय लागू नहीं हो सकेंगे।

(छ) भुगतान संतुलन वाले प्रावधान पर फिर से विचार हुआ और इसमें विकासशील देशों को अपनी राष्ट्रीय जरूरत एवं प्राथमिकता के आधार पर पाबंदियां तय करने और उनमें अदल-बदल करने की आजादी की काफी हद तक रक्षा की गयी है। भारत जैसे विकासशील देशों के लिए यह नियम पूंजीगत वस्तुओं और औद्योगिक तथा कृषि में उपयोग होने वाली चीजों का सुविधा से आयात करने और उपभोक्ता वस्तुओं पर पाबंदियां लगाने देना संभव बनाएगा।

(ज) ट्रिप्स संधि निवेश संबंधी उपायों पर राष्ट्रीय फैसलों और मात्रागत पाबंदियों संबंधी 'गैट' नियमों की पुनर्व्याख्या तक सीमित रही है। किसी तरह की नई बाध्यता और निर्यात संबंधी बाध्यता को संधि के दायरे से बाहर ही रखा गया है। विकासशील देश जब तक भुगतान संतुलन संबंधी समस्या से परेशान हैं, वे आयात संबंधी जरूरतों पर स्वतंत्र फैसला ले सकते हैं। प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेस को अनुमति देने या ऐसे निवेश की सीमा तय करने की कोई बाध्यता नहीं होगी।

## ट्रिप्स

बौद्धिक संपदा अधिकार के संबंध में डंकेल प्रस्ताव की मुख्य बातें ये हैं:

(क) कॉपीराइट संरक्षण (बेर्न) सम्मेलन के फैसलों के अनुसार होगा। इसके दायरे में अभिव्यक्ति, कार्यप्रणाली, ऑपरेशन विधि और गणित की अवधारणाएं भी आएंगी। कंप्यूटर प्रोग्राम, चाहे वह सोर्स में हो या आब्जेक्ट कोड में, को साहित्यिक वस्तु की तरह मानकर उसको संरक्षित किया जाएगा। पढ़े जाने वाले या किसी भी मशीन पर या वैसे भी आंकड़ों या अन्य सामग्री को, जिसकी एक खास रूप देने में बौद्धिक रचना हुई है, भी संरक्षण दिया जाएगा।

(ख) कंप्यूटर प्रोग्राम और सिनेमैटोग्राफी के काम में मूल लेखकों और उनके उत्तराधिकारियों को इनकी मूल प्रति या उसकी कापियों की व्यावसायिक बिक्री, भाड़े पर देने या उन पर रोक लगाने का हक होगा। मोनोग्राम के प्रोड्यूसरों और इसमें किसी भी और तरह का अधिकार रखने वालों को भी इसे भाड़े पर देने, बेचने का हक होगा।

(ग) मोनोग्राम पर अपने प्रदर्शन का मोल तय करने के लिए कलाकारों को उनकी मर्जी के खिलाफ इसका मूल्यांकन करने और उसकी कापी तैयार करने से रोकने का अधिकार होगा। बेतार से अपने प्रदर्शन को दूर भेजने या सदेह प्रदर्शन के समय भी आवाज और तस्वीर को उनकी अनुमति के बगैर कहीं, किसी को दिखाने से रोकने का अधिकार कलाकार को होगा। फोनोग्राम के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कापी करने से रोकने का अधिकार उसके प्रोड्यूसर को होगा।

(घ) वस्तु हो या सेवाएं, ट्रेड मार्क जरूर पंजीकृत होना चाहिए। विशेष जरूरत के समय ट्रेड मार्क का उपयोग बेकार गतिरोध पैदा करने के लिए नहीं करना होगा। ट्रेड मार्क के पंजीकरण में वस्तुओं और सेवाओं की प्रवृति को बाधा नहीं बनना चाहिए।

(च) भौगोलिक सकेतों के मामले में इस बात का कानूनी इंतजाम होना चाहिए कि निहित स्वार्थ वाले, किसी वस्तु को उसके सही मूल की जगह, लोगों को वरगलाने के लिए गलत भौगोलिक मूल का न बता दें,

(छ) स्वतंत्र रूप से बनाये गये नये या मौलिक औद्योगिक डिजाइन को संरक्षण दिया जाना चाहिए।

(ज) वस्तु का हो या प्रक्रिया का, तकनीक के हर क्षेत्र में पेटेंट नये खोजों के लिए उपलब्ध होने चाहिए, लेकिन उन्हें नया, अनुसंधानात्मक कदम वाला और उद्योगों में प्रयुक्त हो सकने वाला होना चाहिए। अनुसंधान की जगह, तकनीक के क्षेत्र और सामान आयातित है या स्थानीय, इस बात का भेदभाव किये बिना पेटेंट उपलब्ध होने चाहिए और पेटेंट नियम लागू होने चाहिए। सार्वजनिक आदेश और नैतिकता, जिसमें मानव, जानवर या पेड़-पौधे के जीवन और स्वास्थ्य की रक्षा शामिल है, वगैरह को छोड़कर प्रस्ताव में मनुष्य या जानवर या पेड़-पौधों के रोग की पहचान और इलाज की विधियों को इस दायरे से बाहर रखते हैं। पेड़-पौधों और जानवरों को पैदा करने की मूल रूप से जैविक पद्धतियों को भी बाहर रखा गया है, लेकिन सूक्ष्म जीवों और गैर-जैव तथा सूक्ष्म-जैव प्रणालियों का पेटेंट हो सकेगा। इसके अलावा, पौधों की किस्मों का संरक्षण पेटेंट या प्रभावी विशिष्ट प्रणाली या फिर दोनों के मेल से किया जाना चाहिए।

(ट) पेटेंट की कालावधि कम-से-कम 20 वर्षों के लिए करने का प्रस्ताव है।

(ठ) अनिवार्य लाइसेंस देने का प्रस्ताव नहीं है और इस मामले में सरकारों को अपने कानूनों में प्रावधान करने की आजादी-सी है, लेकिन ऐसे प्राधिकरण के लिए कड़ी शर्तें हैं। प्रत्येक मामले को उसके अपने गुण-दोष के आधार पर देखा-परखा जाएगा और अनिवार्य लाइसेंस तभी दिया जाएगा, जब पेटेंट को इस्तेमाल करने वाले ने इसका अधिकार रखने वाले से व्यावसायिक शर्तों पर प्राधिकार प्राप्त किया हो और उसे उचित समय के अंदर लाइसेंस पाने में सफलता न मिली हो। ऐसे किसी इस्तेमाल के प्राधिकार की कानूनी वैधता का सवाल न्यायिक पुनर्विचार या किसी प्रत्यक्ष उच्च प्राधिकार के स्वतंत्र पुनर्विचार के अधीन आएगा। अनिवार्य लाइसेंस के मामले में भी ऐसे भुगतान से जुड़े मामले ऐसे ही पुनर्विचार के दायरे में आएंगे।

(ड) कार्यविधि के पेटेंट के बारे में सुझाव दिया गया है कि निम्नलिखित परिस्थितियों में से किसी एक में भी पेटेंट रखने वाले की अनुमति के बिना तैयार कोई भी उसी तरह का माल सही माना जाएगा, अगर उसके खिलाफ ठोस साक्ष्य न उपस्थित कर दिए जाएं: (अ) अगर पेटेंट वाली प्रणाली का तैयार माल नया है।

(ब) अगर इस बात की काफी संभावना हो कि उसी तरह का सामान उसी प्रक्रिया से बना हो और पेटेंट का मालिक इसे बनाने में प्रमुख प्रणाली को स्थापित कर पाने में अक्षम हो ।

(ढ) इंटिग्रेटेड सर्किट के ले-आउट डिजाइन के मामले में भी संरक्षण देने का सुझाव दिया गया है ।

(त) गुप्त सूचनाओं को भी इस सूचना के मालिक से बिना ईमानदारी व्यावसायिक सौदा किये ज्ञान लेने, प्रकट करने या इसको व्यवहार कर लेने से रोकने की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

(थ) सभी देशों को एक वर्ष और विकासशील देशों को चार वर्षों का संक्रमण काल दिया गया है । विकासशील देशों के मामले में तकनीक वाले क्षेत्र में यह समय सीमा और बढ़ सकती है, लेकिन ऐसा तभी होगा, जब यह देश तकनीकी क्षेत्र के पेटेंट को लागू करने को पांच साल के लिए टाल दें । इस प्रकार खाद्य, रसायन, दवा और जैव-तकनीक उत्पादों के मामले में भारत इस नियम को 1 जनवरी 2003 तक टाल सकता है, लेकिन इस नियम के लागू हो जाने के बाद (इसे 1.1.1993 से ही लागू करने पर जोर दिया गया है) ऐसे देशों को इन पेटेंट को लागू करने के साधन उपलब्ध कराने होंगे इन वस्तुओं के पेटेंट संरक्षण की बाध्यता लागू होने के बाद ही इन बातों पर विचार किया जाएगा । पांच वर्षों के लिए विशेष विपणन अधिकार के प्रावधान की भी बात है ।

## सेवाओं का व्यापार

सेवाओं में व्यापार की सामान्य संधि (गैट्स) में एक व्यापक ढांचा बनाया गया है, जिसके तहत सरकारें बाजार तक पहुंच के बारे में सौदा कर सकती हैं । सारी सेवाओं पर लागू होने वाली एकमात्र महत्वपूर्ण बात 'मोस्ट फेवर्ड नेशन ट्रीटमेंट (एम.एफ.एन.-सबसे खास देश) और पारदर्शिता की है । सेवाएं देने वाले विदेशी उद्यमों को अपने बाजार तक पहुंचने देने या राष्ट्रीय उद्यमों के बराबर दर्जा देने की कोई सामान्य बाध्यता नहीं थोपी गयी है । ये सभी आपसी बातचीत और मांग-आपूर्ति के आधार पर तय होंगे । डंकेल ने प्रस्ताव किया है कि इन प्रस्तावों में बेहतर संतुलन के लिए अगले कुछ हफ्तों में बातचीत होनी चाहिए । सेवा क्षेत्र में निवेश और लोगों के आदान-प्रदान में रियायतों के लिए इस बातचीत में मौका है ।

## संस्थागत मसले

(क) बातचीत का एक प्रमुख क्षेत्र विवादों को निपटाना भी था । डंकेल प्रस्ताव में विवाद निपटारे के नियम और प्रक्रिया भी दी गयी है । ये नियम समयबद्ध, स्वचालित और न्यायिक नजरिये वाले हैं । समझौते में शामिल होने वाले देशों के लिए विवाद निपटारे के स्पष्ट प्रावधान रखे गये हैं । इसकी एक विशेषता यह है कि समझौते में शामिल किसी एक पक्ष द्वारा नाराज होकर बदले की कार्रवाई के लिएं कदम उठाने से पहले एक पूर्ण सदस्य देश से प्राधिकार प्राप्त करना होगा । ये जो नये नियम बने हैं, उनका उन देशों के लिए खास महत्व हो गया है, जिनके घरेलू कानून में एकतरफा बदले की कार्रवाई का प्रावधान है ।

(ख) डंकेल प्रस्ताव में बातचीत के जिस एक परिणाम को जोड़ा गया है, वह है बहुपक्षीय व्यापार संगठन (एम.टी.ओ.) का गठन करना, जिसका उद्देश्य इसमें शामिल होने वाले देशों के बीच गैट, गैट्स और ट्रिम्स समझौतों से जुड़े मसलों पर एक साझा संस्थागत ढांचा उपलब्ध कराना है । एमटीओ 'गैट' का अगला स्वरूप होगा । इसके मुख्य अंग होंगे-मंत्री-स्तरीय सम्मेलन, सामान्य परिषद, वस्तु परिषद, सेवा परिषद और बौद्धिक संपदा अधिकार परिषद ।

(ग) अंगीभूत विवाद निवारण प्रणाली एमटीओ का ही एक अंग होगी । इसका व्यावहारिक रूप यह होगा कि गैट्स और ट्रिप्स संधियों का कानूनी दर्जा 'गैट' से अलग होगा, और इस मामले में गैट्स और ट्रिप्स बराबर स्थिति में होंगे, पर तीनों के विवाद निपटाने के लिए एक सामान्य विवाद निवारण प्रणाली रहेगी । व्यावसायिक करार से नाराज होकर बदले की कार्रवाई को अंतिम अस्त्र माना गया है । शुरुआती हिफाजत के अनेक उपाय भी किये गए हैं । इस अस्त्र को अनेक सीढ़ियों को पार करके ही उठाया जा सकता है । जैसे अगर मामला किसी उप-क्षेत्र वाला है, तो उसे उसी स्तर पर निपटाना होगा ।अगर उस उप-क्षेत्र में व्यापार ही न हो रहा हो, तो तभी विजेता पक्ष उसी समझौते के अधीन दूसरे उप-क्षेत्र में जा सकता है । अंतिम उपाय के तौर पर ही यदि मामला गंभीर है, तो विजेता पक्ष बदले की कार्रवाई तक बढ़ सकता है, लेकिन इसके लिए मध्यस्थ से बात करनी होगी और उसके निर्णय ही अंतिम होंगे ।

(घ) महानिदेशक के प्रस्तावों में बातचीत के निष्कर्षों को शामिल करते हुए अंतिम कानून का भी प्रारूप दिया गया है । ऐसा दस्तावेज परिणाम तय करने, निर्देशों की प्रामाणिकता स्थापित करने और वार्ता में शामिल सरकारों द्वारा अपने अधिकारियों से मंजूरी के लिए एक प्रस्ताव रखने की मंशा दिखाने के लिए तैयार किया गया है । इस प्रस्ताव की एक विशेषता यह है कि इसे अपने पूरे रूप में ही मंजूर करने के लिए रखा गया है ।

## भारतीय पेटेन्ट अधिनियम, 1970 की प्रमुख विशेषताएं

**बी.के. कैला**

1. जो आविष्कार नहीं हैं, उनकी सूची अधिनियम की धारा 3 में दी गई है । ऐसी मदों में अन्यों के साथ-साथ ये शामिल हैं:-

   - कृषि अथवा बागबानी की कोई प्रक्रिया,
   - मनुष्यों के चिकित्सीय, शल्य-चिकित्सीय, आरोग्यकारी उपयार, रोग निरोधक उपचार या अन्य उपचारों के लिए कोई प्रक्रिया अथवा पशुओं तथा पौधों के ऐसे ही उपचारों के लिए कोई प्रक्रिया जिससे वे रोगमुक्त हो जाएं अथवा उनका लाभप्रद मूल्य या उनके उतपादों का मूल्य बढ़ जाए ।

2. आविष्कार जो पेटेन्ट के योग्य नहीं है

   - परमाणु ऊर्जा से संबद्ध आविष्कार,
   - रासायनिक पदार्थों पर आधारित वस्तुओं के लिए पेटेन्ट प्रदान नहीं किया जाता, केवल ऐसे पदार्थों के निर्माण की पद्धतियां अथवा प्रतिक्रिया पेटेन्ट योग्य हैं । ये हैं:-

     (1) ऐसी वस्तुएं जिनका भोजन अथवा दवाओं अथवा भेषजों के रूप में उपयोग किया जा सकता हो, अथवा

     (2) रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा तैयार की गई अथवा उत्पादित वस्तुएं।

3. पेटेन्ट के लिए आवेदन

   - प्रत्येक विनिर्देश (स्पेसिफिकेशन) में आविष्कार का पूरा-पूरा विवरण दिया जाएगा,
   - पदाथ तैयार करने की प्रक्रिया के लिए प्रजातिगत (जेनेरिक्स) दावों का संबध निर्माण की केवल एक पद्धति अथवा प्रक्रिया से होना चाहिए,
   - पेटेन्ट उस तारीख से दिनांकित होगा जिस दिन संपूर्ण विनिर्देश दायर किया जाएगा ।

4. पेटेन्ट प्रदान किया जाना - कतिपय शर्तें

   - उस प्रक्रिया का, जिसके लिए पेटेन्ट प्रदान किया जाता है, उपयोग सरकार द्वारा अथवा सरकार की ओर से केवल अपने प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है ।

- किसी दवा अथवा भेजष के पेटेन्ट के मामले में उस दवा अथवा भेषज का आयात सरकार द्वारा अपने उपयोग अथवा वितरण के लिये किया जा सकता है ।

5. <u>पेटेन्टी का अधिकार</u>

- यदि कोई पेटेन्ट किसी वसतु अथवा पदार्थ के निर्माण के लिए किसी पद्वति अथवा प्रक्रिया का हो तो पेटेन्टी को, उसके एजेंट को अथवा उसके लाइसेंसी को भारत में उस पद्वति अथवा प्रक्रिया का इस्तेमाल करने का अनन्य अधिकार होगा ।

6. <u>पेटेन्ट की अवधि</u>

- प्रक्रिया के पेटेन्ट के लिए पेटेन्ट को सील करने की तारीख से 5 वर्ष अथवा पेटेन्ट के आवेदन की तारीख से 7 वर्ष, इनमें से जो भी कम हो, तथा
- पेटेन्ट की तारीख से 14 वर्ष ।

7. <u>पेटेन्ट को वापिस लिया जाना</u>

- लोकहित में : उपयोग की विधि राज्य अथवा सामान्य रूप से जनता के हितों के विरूद्व हो ।

8. <u>पेटेन्ट आविष्कार पर लागू सामान्य सिद्वान्त</u>

- पेटेन्ट आविष्कार को प्रोत्साहन देने के लिए प्रदान किए जाते हैं,
- यह सुनिश्चित करने के लिए कि आविष्कार का भारत में व्यापारिक आधार इस्तेमाल किया जाएगा,
- पेटेन्टों को पूरा-पूरा और बिना किसी अनावश्यक विलम्ब के काम में लाया जाएगा,
- पेटेन्ट पेटेन्टियों को मात्र विदेशों से पेटेन्ट आयात करने के लिए एकाधिकार प्रदान करने के वास्ते नहीं दिया जाएगा ।

9. <u>अनिवार्य लाईसेंस</u>

- पेटेन्ट से असंतुष्ट लोगों की युक्तियुक्त अपेक्षाएं पूरी नहीं होती अथवा आविष्कार उचित कीमत पर उपलब्ध नहीं कराया जाता तो पेटेन्ट सील करने की तारीख

से तीन वर्ष बाद सरकार अनिवार्यतः पेटेन्टधारक को किसी और व्यक्ति को लाइसेंस देने के लिए मजबूर कर सकती है ।

10. खुला लाइसेंस

- केन्द्रीय सरकार द्वारा, लोगों की उचित अपेक्षाएं पूरी न होने पर, उचित कीमत पर जनता को न मिलने पर,
- प्रक्रिया पेटेन्ट कहां लागू होता है ? : खाद्य, औषध; रासायनिक पदार्थों के मामले पेटेन्ट सील करने की तारीख से तीन वर्ष बाद "खुला लाइसेंस" अपने आप लागू हो जाता है,
- रायल्टी की रकम कर सहित बिक्री मूल्य के 4 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए ।

11. अपील

केन्द्रीय सरकार अथवा नियंत्रक के आदेशों के खिलाफ पेटेन्ट अधिनियम में अपील का कोई प्रावधान नहीं है ।

......

## भारतीय पेटेन्ट व्यवस्था और विकसित देशों की प्रतिक्रिया
## बी.के. कैला

1. **भारतीय पेटेन्ट व्यवस्था**

भारत में वर्तमान पेटेन्ट व्यवस्था पिछले 18 वर्ष से बहुत अच्छी तरह से काम कर रही है और देश में बहुमुखी विकास का वातावरण तैयार करने में इसकी भूमिका महत्वपूर्ण रही है । इस व्यवस्था के रहते हुए वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकीविदों और उद्यमियों के प्रयत्नों से ऐसी-ऐसी नई-नई प्रौद्योगिकियों का विकास हुआ है जिनसे देश के औद्योगिक विकास को बहुत बढ़ावा मिला है और भारत की गिनती उभरते हुए देशों में होने लगी है ।

2. **विकसित देशों की प्रतिक्रिया**

पिछले कुछ वर्षों से भारत सरकार पर विदेशी हितों ने यह दबाव डालना शुरू किया है कि हमारे पेटेन्ट अधिनियम, 1970 में व्यापक संशोधन किए जाएं । विदेशी हितों की इस आक्रामक पहल के कई स्वरूप हैं:

**विश्व बौद्धिक सम्पत्ति संगठन**

- विश्व बौद्धिक सम्पत्ति संगठन और अन्य अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों के माध्यम से भारत पर पेरिस कन्वेंशन में शामिल होने के लिए दबाव,
- भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी पहल करार के जरिए, जिसकी अवधि अक्तूबर 1988 में बढ़ाई गई है, भारत पर दबाव,
- गैट वार्ता के उरुग्वे राउंड के माध्यम से दबाव और
- यू.एस. ओमनीबस एंड कॉम्पीटिटिवनेस एक्ट 1988 - स्पेशल301 और सुपर 301 के उपबंधों के माध्यम से दबाव ।

3. **भारतीय पेटेन्ट अधिनियम, 1970**

भारतीय पेटेन्ट अधिनियम के जिन कुछ मूलभूत उपबन्धों से विदेशी हितों को परेशानी होती है, उनका सम्बन्ध इनसे है:

- कृषि अथवा बागबानी की प्रक्रियाओं को पेटेन्ट से अलग रखा जाना,
- रोगमुक्त करने और आर्थिक मूल्यों को बढ़ाने के लिए मनुष्यों, पशुओं अथवा वनस्पतियों के उपचार की प्रक्रियाओं को पेटेन्ट से अलग रखा जाना,

- औषध, कृषि, रसायन, खाद्य वस्तुओं और अन्य रासायनिक पदार्थों जैसी हमारी महत्वपूर्ण आवश्यकताओं के क्षेत्रों के लिए उत्पाद पेटेन्ट §प्रोडक्ट पेटेन्ट§ के बजाय निर्माण प्रक्रिया पेटेन्ट §प्रासेस-पेटेन्ट§की व्यवस्था करना,
- प्रक्रिया पेटेन्ट के अंतर्गत वस्तुओं की पेटेन्ट अवधि 5/7 वर्ष तक और अन्य वस्तुओं के लिए 14 वर्ष तक रखना, और
- अनिवार्य लाइसेंसिंग, लाइसेंसिंग अधिकारों और पेटेन्ट के रद्द किए जाने की व्यवस्था होना जिससे एक खास अवधि के अन्दर-अन्दर पेटेन्ट वस्तु का उत्पादन सुनिश्चित किया जाता है ।

उपर्युक्त व्यवस्थाओं से भारत के बाजार में बहुराष्ट्रीय निगमों को उनके उत्पादों का एकाधिकार स्थापित करने में सहायता नहीं मिलती । लेकिन, भारतीय पेटेन्ट व्यवस्था से स्पर्धा के वातावरण को प्रोत्साहन देने में निश्चय ही सहायता मिलती है और विदेशी हित इसे पसंद नहीं करते । यहां तक कि जब भारतीय वैज्ञानिक नई प्रौद्योगिकियों का आविष्कार करते हैं, तो विदेशी हित उनके प्रयासों को कुंठित करने के लिए पूरा-पूरा प्रयत्न करते हैं ।

4. गैट वार्ता

अब संयुक्त राज्य अमेरिका तथा गैट वार्ता में शामिल अन्य औद्योगिक देशों द्वारा भारत तथा अन्य विकासशील देशों पर एक बिल्कुल नई पेटेन्ट व्यवस्था लागू करने के वास्ते दबाव डाला जा रहा है । गैट वार्ता का उरुग्वे राउंड वर्ष 1986 में शुरू हुआ था । वर्तमान गैट वार्ता में व्यापार सम्बन्धी बौद्धिक सम्पत्ति पर गम्भीरता से विचार-विमर्श किया गया । विकसित देश व्यापार संबंधी बौद्धिक सम्पत्ति को गैट-वार्ता के क्षेत्र में लाने के इच्छुक थे, जबकि विकासशील देशों ने बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के विषय पर गैट वार्ता में किसी प्रकार की चर्चा करने का विरोध किया था । विकासशील देशों का मत है कि बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों पर चर्चा करने के लिए उचित मंच विश्व बौद्धिक सम्पत्ति संगठन है, दोनों पक्ष अपने-अपने तर्क पर अड़े रहे और बहुराष्ट्रीय निगमों के समर्थन से यूरोपीय, अमेरिकी और जापानी व्यापारिक हितों द्वारा पहले से अधिक आक्रामक प्रहार किया गयाऔर गैट वार्ता के उरुग्वे राउंड में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज प्रस्तुत किया गया। इस दस्तावेज में कहा गया है कि भारत और कुछ अन्य देशों में इस समय जो बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार उपलब्ध हैं, वे अपर्याप्त हैं । इन पक्षों ने बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों के लिए निम्नलिखित मॉडल का प्रस्ताव किया:

- पेटेन्ट में, बिना किसी भेदभाव के, उद्योगों में काम में लाए जाने वाले किसी भी नए उत्पाद और प्रक्रिया को शामिल किया जाना चाहिए,
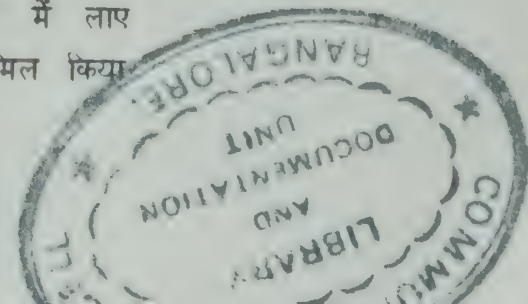
- पेटेन्ट धारकों को पेटेन्ट आविष्कार/प्रक्रिया,निर्माण, उपयोग अथवा बिक्री का 20 वर्ष तक का अधिकार दिया जाए, चाहे पेटेन्ट उत्पाद आयात से ही उपलब्ध हो । उसे पेटेन्ट का उत्पाद मान लिया जाना चाहिए और इस अवस्था में पेटेन्ट को रद्द नहीं किया जाना चाहिए ।
- पेटेन्ट की कथित नकल करने वाले को अपने बचाव के लिए सबूत {रिवर्सल आफ बर्डन आफ प्रूफ} पेश करना होगा कि वह अपराधी नहीं है ।

गैट करार के प्रारूप का जो अंतिम पाठ स्वीकार किया जाना है, उसमें उपर्युक्त उपबंध तथा कुछ और कड़े प्रावधान जोड़ दिए गए हैं ।

उपर्युक्त मॉडल का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि विकासशील देश पेटेन्ट वस्तुओं/प्रक्रियाओं के लिए बाजार के अनन्य आरक्षण की मांग कर रहे हैं । इस अभियान का नेतृत्व अमेरिका कर रहा है । इसी कारण विदेशी हित हमारी पेटेन्ट व्यवस्था को अपर्याप्त कहते हैं । इन्हें भारत सहित और विकासशील देशों की आवश्यकताओं की कोई परवाह नहीं । इस विषय पर हमारा कानून और हमारी नीतियां हमारी राष्ट्रीय आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुरूप हैं । यदि हमारी सरकार इस सवाल पर झुक जाती है तो यह देश को आर्थिक गुलामी की ओर धकेलना होगा । भारत का हित इसमें है कि इस दबाव को किसी भी हालत में बरदाश्त न किया जाए ।

## 5. हमारी पेटेन्ट व्यवस्था में परिवर्तनों के परिणाम

यदि कृषि क्षेत्र को पेटेन्ट व्यवस्था के अंतर्गत लाया जाता है, यदि प्रक्रिया पेटेन्ट व्यवस्था उत्पाद पेटेन्ट में बदल दी जाती है, यदि अनिवार्य लाइसेंसिंग को इतना उदार बना दिया जाता है कि इसे लागू करना मुश्किल हो जाता है,यदि पेटेन्ट सुरक्षा की अवधि 20 वर्ष तक बढ़ा दी जाती है और यदि सबूत के भार के उल्टाव {रिवर्सल आफ बर्डन आफ प्रूफ} का विचार स्वीकार कर लिया जाता है तो हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न हो जाएगी और विकास की दृष्टि से ऐसा करना निम्नलिखित कारणों से बहुत घातक सिद्ध होगाः

- भारतीय कृषि अर्थ-व्यवस्था के विकास को दिशा प्रदान की शक्ति बहुराष्ट्रीय निगमों के हाथ में चली जाएगी ।
- इस समय जो अनुसंधान कार्य हो रहा सहै, वह रुक जाएगा।
- नए-नए उत्पाद और नई-नई किस्में निकालना विदेशी पेटेन्टधारकों द्वारा सब-लाइसेंस देने पर निर्भर करेगा और इस प्रकार हम अपने कानूनों द्वारा आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लक्ष्य से वंचित हो जाएंगे ।

- आयात पर हमारी निर्भरता बढ़ जाएगी और आयात के लिए हमें मुहंमांगे दाम चुकाने होंगे और इस प्रकार हमारा भुगतान संतुलन §बैलेंस आफ पेमेंट§ बिगड़ जाएगा। इससे निर्यात को बहुत बड़ा धक्का लगेगा । हम कई विकसित और विकासशील देशों को भविष्य में औषधियों का निर्यात करने की प्रतियोगिता के अवसर से भी वंचित हो जाएंगे,
- इससे हमारे युवा उद्यमियों के लिए व्यापार के नए अवसर अवरूद्ध हो जाएंगे तथा कृषि क्षेत्र को आधुनिक बनाने की प्रक्रिया को भी बड़ा धक्का पहुंचेगा।

ऊपर जिन परिवर्तनों की मांग की गई है, वे पूर्णतया हमारे राष्ट्रीय हित के विरूद्ध हैं और अब सवाल पैदा होता है कि क्या हम अपने विकास और आत्मनिर्भरता की कीमत पर इन देशों के आगे झुक जाएं ? गैट वार्ता के प्रति हमारे दृष्टिकोण और अमेरिका द्वारा व्यापार पर लगाए जाने वाले प्रतिबंधों की धमकी पर गहराई से विचार किया जाना चाहिए और इसे दीर्घकालीन परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए ।

सबसे बुरी बात यह है कि यदि गैट करार के प्रारूप को स्वीकार कर लिया जाता है तो हमें अपने सभी आर्थिक कानूनों को उसके अनुरूप बदलना होगा तथा इन कानूनों में संशोधन करने का अधिकार हमारी संसद को भी नहीं होगा ।

# भारतीय मूल्यों पर डंकेल का हमला

वन्दना शिवा, थर्ड वल्ड नेटवर्क

भोजन की सुरक्षा का मतलब है भोजन प्राप्त करने की लोगों की योग्यता और भोजन प्राप्त करने का उनका अधिकार। भारत जैसे देश में, जहां अधिसंख्य लोग अपनी आजीविका कृषि से चलाते हैं, उनकी भोजन की सुरक्षा खाद्य उत्पादन में उनकी सहभागिता पर आधारित है। कृषि प्रधान समाज में खाद्य का उत्पादक होकर ही व्यक्ति खाद्य के उपभोक्ता बनते हैं। उत्पादन की प्रक्रिया से उनको अलग हटाने का मतलब है, उन्हे उपभोग की प्रक्रिया से भी हटाना।

डंकेल प्रस्ताव भारतीय किसानों के लिए मौत की घंटी की तरह हैं। चाहे राज राहत (सब्सिडी) का मसला हो, बाजार तक पहुंच का या बौद्धिक सम्पदा अधिकारों का, भारतीय किसान के सामने बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के बीज और कृषि व्यापार को लेकर अस्तित्व का संकट खड़ा हो गया है। गैट में, कृषि क्षेत्र में जिस स्वतंत्र व्यापार को प्रस्ताव बनाया गया है, उसका उद्देश्य बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को कृषि उत्पादन के क्षेत्र में बिना किसी सामाजिक प्रतिबन्ध और दायित्व के निवेश, उत्पादन और व्यापार की स्वतंत्रता देना है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को इस तरह की स्वतंत्रता देने का मतलब किसानों और उपभोक्ताओं के स्थानीय वातावरण, स्थानीय रुचियों और स्थानीय संस्कृति की आवश्यकताओं के अनुसार उत्पादन और उपभोग करने की स्वतंत्रता को नकारना है। कृषि क्षेत्र में स्वतंत्र व्यापार हमारी ग्रामीण जनता की आर्जीविका, हमारे पर्यावरण, हमारे स्वास्थ्य और, हमारी विविधतापूर्ण भोजन संस्कृतियों के लिए वास्तविक खतरा है।

## किसानों की आजीविका के अवसर खतरे में पड़ जायेंगे

छोटे किसानों और कास्तकारों के कृषि क्षेत्र से विस्थापन से उनकी आजीविका के अवसर खतरे में पड़ जाएंगे। यह विस्थापन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा बाजार में सस्ता खाद्यान्न लाने से या पूंजी और निर्यात प्रधान कृषि प्रशोधन उद्योग की स्थापना से होगा। गैट समझौते के डंकेल प्रस्ताव में एक धारा है, जिसका शीर्षक है- उत्पादक विमुक्ति कार्यक्रमों के माध्यम से प्रदान की जाने वाली संरचनागत समायोजन सहायता। यह घटना अमरीका में हो चुकी है, जहां कृषि ऋण 70 के दशक के एक खरब 20 अरब डालर से बढ़कर 80 के दशक की शुरुआत में दो खरब 25 अरब डालर हो गया। और क्योंकि इस प्रक्रिया में छोटे-छोटे किसानों को अपनी ज़मीनों से हाथ धोना पड़ा, इसलिए 1950 से 1960 के बीच किसानों की संख्या में 30 प्रतिशत की कमी हो गई। 1960 से 1970 के बीच 26 प्रतिशत की कमी फिर हुई। 1981 के बाद से करीब 6 लाख किसान अपनी जमीनों से बेदखल हो चुके हैं। अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक और गैट के फार्मूले उन्हीं नीतियों को भारतीय कृषि पर भी लागू करना चाहते हैं। अगर आगामी कुछ वर्षों में हमारे देश के 50 प्रतिशत किसान और कास्तकारों को उनकी जर्मीन से बेदखल कर दिया जाय, तो परिणामों की कल्पना की जा सकती है। यहां यह तर्क भी नहीं दिया जा सकता कि बेदखल हुए किसानों को उद्योग क्षेत्र में रोजगार मिल जाएगा। उद्योग क्षेत्र में भी निकासी नीति अपना काम कर रही है।

तीसरी दुनिया के किसानों का विस्थापन केवल उत्पादन से ही नहीं, बल्कि व्यापार से भी होता है। वस्तुतः कृषि में 'स्वतंत्र व्यापार', कृषि व्यापार और उत्पादन पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का नियंत्रण बढ़ाने का मूल चरण है। एक बहुत बड़ी गलत धारणा यह है कि कृषि क्षेत्र का उदारीकरण किसानों को अधिक और तीसरी दुनिया की अर्थ-व्यवस्थाओं पर खुला हमला है। अमरीका की इस नीति द्वारा विश्व कीमतों में लगभग आधी कटौती किये जाने से थाईलैंड के चालीस लाख चावल उत्पादक किसान इतनी बुरी तरह प्रभावित हुए कि उन्हें अमरीकी कृषि विधेयक के विरुद्ध बैंकाक में अमरीकी दूतावास के सामने प्रदर्शन करने पर मजबूर होना पड़ा।

दूसरे, कृषि-उत्पाद का निर्यात किसान नहीं करते बल्कि वे कम्पनियां करती हैं, जिनका अनाज-व्यापार पर नियंत्रण होता है। और ये कम्पनियां विश्व की भोजन आपूर्ति पर अपना शिकंजा निरन्तर कसती जा रही हैं। बाजार, व्यापार और शक्ति के केवल कुछ बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथ में केन्द्रित हो जाने से तीसरी दुनिया के किसानों का प्रतियोगिता में टिके रहना असम्भव हो जाता है।

जब भी कभी कम्पनी हितों को चोट पहुंची है, तो अमरीकी सरकार ने राजनीतिक रूप से बदला लिया है। नाइजीरिया के मामले पर गौर करें तो गैट की उरुग्वे वार्ता में विकासशील देशों की खाद्य नीति संप्रभुता को पैदा हुए खतरे को साफ-साफ समझा जा सकता था। नाइजीरिया उपसहारा क्षेत्र का कभी सबसे बड़ा आयात-कर्ता हुआ करता था। 1988 में नाइजीरिया सरकार ने गेहूं के आयात पर प्रतिबंध लगा दिया, क्योंकि इस स्वतंत्र बाजार प्रक्रिया को फिर से शुरू करने की मांग की जाएगी। उनकी इस स्वतंत्रता से नाइजीरिया के किसानों की घरेलू खाद्य सामग्री उत्पन्न करने की स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाएगी, इसकी चिन्ता न कारगिल कम्पनी को है, न अमरीका को। हाल ही में भारत में किया गया गेहूं का आयात देश के लिए इसी तरह का खतरा पैदा करने की आशंका वाला है। सस्ता आयात किसानों को भारी नुकसान पहुंचायेगा और उन्हें उत्पादन प्रक्रिया से बाहर कर देगा। इसके अलावा यह हमारे भुगतान संतुलन की स्थिति को बिगाड़ेगा और विदेशी ऋण में बढ़ोतरी करेगा, क्योंकि खाद्य पदार्थों का घरेलू उत्पादन होने के बजाय आयात किया जाएगा। सरकारों और कम्पनियों के सहज रिश्ते को देखते हुए कोई ताज्जुब नहीं होगा यदि गैट के मंच पर परिभाषित स्वतंत्र बाजार, कीमतों का नियंत्रण हमारी घरेलू नीतियों के बजाय बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथ में दे दे। स्वतंत्र व्यापार का मतलब बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का व्यापार है और यह तीसरी दुनिया के लोगों और सरकारों को स्वतंत्रता और स्वायत्तता से वंचित कर देने पर टिका है।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार तीसरी दुनिया के किसानों की जैविक सम्पदा चुराने की पश्चिम की नयी कारीगरी है। यह चोरी केवल पश्चिमी नजरिए से ही की गयी खोजों को महत्व देकर और तीसरी दुनिया के किसानों की खोजों, उनके श्रम और उनके द्वारा तैयार किये गये बीज आदि के महत्व को नकार कर की जाती है। किसानों द्वारा तैयार बीज मात्र एक कच्चा माल मान लिया जाता है कि ऐसे बीज हमारी जरूरतों को पूरा नहीं कर सकते और वे उत्पादन शक्ति वाले नहीं हैं। तीसरी दुनिया के किसानों ने अपने अनुभव, ज्ञान और मेहनत के बल पर फसल इत्यादि के मामले में जो उपलब्धियां हासिल कीं वे निरर्थक नहीं हैं।

# दो खेमों की लड़ाई है कृषि उदारीकरण का मुद्दा

ऊषा मेनन, वैज्ञानिक
नेशनल इन्सटीटयूट आफ साइन्स टेक्नालोजी एण्ड डिवलपमेंट स्टडीज

गैट में कृषि और बौद्धिक संपदा विषयक जो वार्ताएं हो रही हैं, उनके परिणाम भारतीय कृषि के लिए बहुत गंभीर होंगे। दुर्भाग्यवश हमारे देश की जनता इस बात के प्रति समुचित रूप से जागरुक नहीं लगती कि अर्थव्यवस्था के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र पर, जिससे बहुसंख्यक जनता को रोजगार मिलता है, कितना बड़ा खतरा मंडरा रहा है। ये वार्ताएं हमारी उस योग्यता पर प्रहार करती प्रतीत होती हैं, जिसके द्वारा हम अपनी कृषि को अपनी आवश्यकतानुसार ढालते हैं। ये वार्ताएं कृषि निर्यात के लिए दी जाने वाली सब्सिडी को लेकर उतना चिंतित नहीं हैं, जितना कि इसके घरेलू उत्पादन एवं वितरण के हर पहलू और कृषकों के खेती कार्य को लेकर।

## अब कृषि का सवाल केन्द्र में

फिर गैट में वस्तुओं के विश्व व्यापार में अभी तक कृषि शामिल नहीं थी। 1955 में अमरीका ने अपने कृषि समायोजन एक्ट को विशेषरूप से मुक्त करवाया और क्योंकि गैट ने यूरोपियन देशों की सम्मिलित कृषि नीति को नकारा नहीं था, इसे गैट में विधिसम्मत माना गया।

लेकिन 1986 में, जब गैट वार्ताओं का वर्तमान 'उरुग्वे राउंड' शुरू हुआ, तो स्थिति बदल चुकी थी। गैट ढांचे से बाहर का होने के कारण वार्ताओं में कृषि ने केन्द्र स्थान ग्रहण कर लिया। साधारणतया इसका मतलब यह होना चाहिए कि गैट वार्ताएं विश्व समुदाय का ध्यान इस ओर आकर्षित करें कि कृषि की कुछ प्रमुख समस्याएं विश्वव्यापी हैं और जिनका समाधान विभिन्न देशों की सरकारों के अलग-अलग प्रयासों से नहीं हो सकता। इसके लिए विश्व समुदाय के संयुक्त प्रयासों की आवश्यकता है। यदि हम कृषि के विश्व परिदृश्य को देखें, तो निश्चय ही वहां ऐसी समस्याएं हैं, जिनकी ओर विश्व की सरकारों का ध्यान जाना जरूरी है। समस्या का सार इस तथ्य में निहित है कि पृथ्वी के एक क्षेत्र में रहने वाले कुछ लोग जहां भूखे हैं, वहीं दूसरे क्षेत्र में खाद्यान्न जरूरत से कहीं ज्यादा है। असंतुलन की यह मूल समस्या इतनी विकराल है कि इसके समाधान के लिए सबके संयुक्त प्रयासों की आवश्यकता है। फिर यह समस्या कम भी नहीं हो रही है। हाल ही की मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, 1985 में विकासशील देशों के खाद्यान्नों पर होने वाला खर्च विकसित देशों के खाद्यान्न पर होने वाले खर्च का एक तिहाई था और भारत का खर्च विकसित ... के खर्च का 19 प्रतिशत था। 1990 में अविकसित देशों के पांच वर्ष से कम आयु के अपौष्टिक आहार से पीड़ित कुल बच्चों की संख्या 17.7 करोड़ थी, जबकि विश्व के विकसित क्षेत्रों में अत्यधिक आहार के कारण पीड़ित होने वालों की समस्या बदस्तूर जारी रही।

गैट वार्ताएं इस तरह की समस्याओं पर ध्यान नहीं दे रही हैं। उरुग्वे राऊंड की गैट वार्ताओं में कृषि मामले को उठाने का संदर्भ अमरीका और यूरोपीय देशों के बीच कृषि व्यापार बाजार में चल रही प्रतिद्वन्द्विता है। सत्तर के दशक में यूरोपीय समुदाय खाद्यान्नों के आयातक से खाद्यान्नों का निर्यातक बन गया। अस्सी के दशक में यूरोपियन समुदाय ने खाद्यान्न अत्यधिक होने के कारण नहीं, बल्कि निर्यात-बाजार को हथियाने की दृष्टि से अपनी निर्यात नीति का निर्माण किया।

1980 तक उत्तरी अमरीका और यूरोप के कुल कृषि उत्पादन का एक तिहाई हिस्सा निर्यात हेतु था। यद्यपि इन दोनों क्षेत्रों का उत्पादन और निर्यात लगातार बढ़ता रहा, लेकिन विकासशील देशों में इसकी मांग उतनी नहीं बढ़ी। कुछ देशों में आत्म-निर्भरता बढ़ जाने के कारण तथा कुछ देशों पर अत्यधिक कर्ज चढ़ जाने के कारण आयात पर्याप्त मात्रा में नहीं बढ़ा। इस कारण कृषि निर्यात के इन दो खेमों में लड़ाई शुरू हो गयी। खाद्यान्नों के बढ़ते भण्डार और निर्यात बाजार में मूल्य-कटौती के कारण उन पर सब्सिडी का भार बढ़ता गया, क्योंकि यूरोप और अमरीका में कृषि उत्पादन में जो बढ़ोत्तरी हुई थी उसका कारण सब्सिडी थी। 1986 तक अमरीका का फार्म बजट 22 अरब डालर तक पहुंच गया। 1985 में प्रतिद्वन्द्विता को और अधिक सशक्त बनाने के लिए अमरीका ने अमरीका फार्म एक्ट द्वारा समर्थन मूल्य को उत्पादन लागत से भी कम कर दिया और निर्यात सब्सिडी बढ़ा दी।

यही वह संदर्भ था, जिसके कारण 1986 में 'उरुग्वे राउंड' की गैट व्यापार वार्ताओं में कृषि व्यापार उदारीकरण के मुद्दे को शामिल किया गया। प्रतिदिन भूखे रहने वाले लोगों के प्रति मानवीयता का अमूर्त सिद्धान्त या प्रतिबद्धता वह कारण नहीं है कि जिसने कृषि को गैट वार्ताओं में शामिल करने के लिए विकसित देशों को प्रेरित किया हो।

कृषि वार्ता विभिन्न हिस्सों में विभाजित है, जिनका सम्बन्ध (1) आयातबहुलता (2) निर्यात प्रतिद्वन्द्विता (3) आन्तरिक सहायता और (4) स्वास्थ्य तथा वनस्पति स्वास्थ्य के उपायों से है। इन पहलुओं के अलावा जो विशेषतया विकासशील देशों से सम्बन्धित है और जिन्हें इन देशों के लिए ही विशिष्ट कहा गया है, यह समझना भी महत्वपूर्ण है कि इन वार्ताओं का भारतीय कृषि पर सम्भावित असर क्या पड़ेगा ?

इन वार्ताओं में निश्चिय ही यूरोपियन समुदाय और अमरीका मुख्य भूमिका निभा रहे हैं। इसके अलावा उन देशों के समूह का योगदान, जो कृषि का निर्यात बिना सब्सिडी के करते हैं, भी महत्वपूर्ण हैं। इस समूह में जिसे केर्न्स समूह कहा जाता है- अर्जेंटीना, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, कनाडा, थाइलैंड और उरुग्वे शामिल हैं। केर्न्स समूह की इन वार्ताओं में इनकी स्थिति अमरीका की तरह है। यद्यपि केर्न्स समूह में कुछ विकासशील देश भी हैं, लेकिन यहां यह जान लेना जरूरी है कि इन देशों का कृषि व्यवसाय बहुराष्ट्रीय निगमों के अधिकार में है, जैसे अर्जेंटीना में स्थित कारगिल का खाद्यान्न व्यापार।

## विकास की संभावनाएं समाप्त

'डंकेल ड्राफ्ट' के अन्तर्गत जो प्रस्ताव हैं वह भारत की कृषि विकास संभावनाओं को बिल्कुल समाप्त कर देंगे। कृषि उत्पादों पर दी जाने वाले मूल्य समर्थन को कम कर देंगे। खाद्यान्नों की सुरक्षा के लिए सरकार द्वारा किये जाने वाले भंडारण की क्षमता पर रोक लगा देंगे। बीजों, सिंचाई, ऊर्जा, रासायनिक खाद आदि पर दी जाने वाली आवश्यक सब्सिडी को, जिनकी कृषि की नयी तकनीक को बढ़ावा देने के लिए जरूरत है, खत्म कर देंगे। वर्तमान सार्वजनिक वितरण प्रणाली को बनाये रखने और मजबूत करने के सरकार के प्रयासों पर रोक लगा देंगे। हमारे देश के बाजारों को खाद्यान्न आयात के लिए खोल देंगे। बौद्धिक संपदा व्यापार अधिकार के तहत हमारे किसानों को बीजों के लिए बहुराष्ट्रीय निगमों की दया पर छोड़ देंगे।

## विवाद निपटारा पद्धति के सन्दर्भ में

## वैकल्पिक रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए

डा0 बी. एस. चिमनी, एसोसियेट प्रोफेसर,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

संस्थागत मामलों, विवाद निपटारा पद्धति और उससे संबंधी नियमों, प्रक्रियाओं की समझ को लेकर तैयार किये गये डंकेल प्रस्ताव में ऐसे प्रावधान निहित हैं जो भारत के लिए घातक परिणाम देने वाले हैं। यह सोच कि डंकेल प्रस्ताव के प्रावधान समयबद्ध, स्वस्फूर्त और न्यायिक दृष्टिकोण के साथ तैयार किये गये हैं, इसलिए ये हमारे लिए लाभदायक होंगे, पूरी तरह असंगत है। वास्तविक स्थिति यह है कि इसके प्रावधान, विवाद निपटारा पद्धति को विभिन्न मसलों से जुड़ी वैधानिक प्रक्रियाओं और क्षेत्रों से काटकर देखते हैं। यह भी ध्यान देने की बात है कि डंकेल प्रस्ताव की सीमाओं में बौद्धिक सम्पदा अधिकार, व्यापार संबंधी निवेशगत उपाय और सेवाओं को भी शामिल किया गया है। लेकिन जब इस प्रस्ताव के सारे प्रावधानों का बारीकी से जायजा लिया जाए तो साफ-साफ नजर आता है कि इन्हें विकसित देशों के हितों को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। इससे भी बड़ी बात यह है कि प्रस्ताव के तहत रखे गये किसी भी मसले पर विवाद की स्थिति में विवाद का निपटारा उन मध्यवर्ती संस्थाओं द्वारा किया जाएगा जो 'गैट' सचिवालय द्वारा गठित की जाएंगी और इसमें किसी भी अनचाहे के विरुद्ध निषेधात्मक कार्रवाई की पूरी संभावना रहेगी। इससे स्पष्ट मालूम होता है कि समयबद्ध, स्वस्फूर्त और न्यायिक दृष्टिकोण दरअसल विकसित देशों के हितों का दृष्टिकोण है। संक्षेप में डंकेल प्रस्ताव का निहितार्थ यह है कि विकसित देश हमारे स्वायत्त अधिकारों को तत्काल प्रभावित करने वाले भेदभाववादी नियमों को जबरिया लागू करा सकते हैं।

## डंकेल प्रस्ताव और बदले की कार्रवाई को वैधानिकता

डंकेल प्रस्ताव के प्रावधान उस पद्धति को बनाने वाले हैं जो अमरीका की 'स्पेशल 301' धारा को कानूनी मान्यता प्रदान करती है और साथ ही इसे पूरी दुनिया में लागू करने की व्यवस्था भी। इसलिए इन प्रस्तावों के संदर्भ में यह दावा करना निहायत बेइमानी है कि नयी विवाद निपटारा पद्धति में उन देशों के लिए निषेधात्मक उपाय किये गये हैं जिनके घरेलू कानूनों में एकपक्षीय कार्रवाई का प्रावधान निहित है। एकपक्षीय कार्रवाई की जरूरत ही कहां पैदा होती है जब अमरीका जैसे विकसित देशों के हितों को 'ट्रिप्स', 'ट्रिम्स' और 'गैट' के मसौदे में सुरक्षित कर दिया गया हो और इनके द्वारा बदले की कार्रवाई को वैधानिकता प्रदान कर दी गयी हो। उदाहरण के लिए अमरीका ने भारत के खिलाफ 'स्पेशल 301' प्रावधान का उल्लेख यह कह कर किया कि भारत बौद्धिक सम्पदा के क्षेत्र में अपर्याप्त संरक्षण प्रदान करता है इसलिए उसके विरुद्ध खाद्य के क्षेत्र में बदले की कार्रवाई की जा सकती है। एक पक्षीय बदले की कार्रवाई की धमकी इस तथ्य से पैदा होती है कि इस समय 'गैट' में 'ट्रिप्स' को नियंत्रित करने वाले नियम या तो हैं ही नहीं या फिर उनका अनुपालन ही नहीं होता। यदि उचित संरक्षण की मांग मान ली गयी और एक क्षेत्र का बदला दूसरे क्षेत्र में लेने की पद्धति को वैधानिकता प्रदान कर दी गयी तो एकपक्षीय बदले की कार्रवाई की आवश्यकता ही खत्म हो जाएगी। एक देश जब बहुपक्षीय पद्धति के जरिये अपने हितों को साध सकेगा तो फिर वह एकपक्षीय कार्रवाई के चक्कर में आखिर क्यों पड़ेगा ? इसका एक दुःखद पहलू यह भी है कि डंकेल प्रस्ताव अब सभी विकसित देशों को बदले की कार्रवाई का अधिकार दे रहा है। इस तरह इसने 'स्पेशल-301' प्रावधान को सार्वभौमिक कर दिया है।

तर्क यह दिया जाता है कि जब बदले के प्रति कार्रवाई (एक क्षेत्र का बदला दूसरे क्षेत्र में) का प्रावधान किया गया है तो यह अंतिम उपाय के रूप में किया गया है और साथ ही इसमें विवाचन का सुरक्षात्मक पहलू भी जोड़ा गया है। ये दावे तो तिनके के सहारे तैरने जैसी बात करते हैं। अगर यह ध्यान में रखकर सोचा जाए कि यह प्रावधान विकसित देशों द्वारा जोर देकर सिर्फ इसलिए जुड़वाया गया है कि कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें सीधे बदले की कार्रवाई नहीं की जा सकती है तो विवाचन संबंधी प्रावधान की असलियत सामने आ जाती है। दूसरे शब्दों में, बदले की प्रति कार्रवाई अंतिम उपाय के रूप में नहीं बल्कि पहले उपाय के रूप में की जा रही है। फिर जिस प्रकार की संरचनागत स्थिति है, उसमें प्रति-कार्रवाई से संबंधित सिद्धान्तों और प्रक्रियाओं का पालन किया गया है कि नहीं, इसे लेकर विवाचन के किसी सार्थक परिणाम की कल्पना नहीं की जा सकती है। इसके अलावा बदले की कार्रवाई के प्रावधान को इस तरह से निरुपित किया गया है कि सिद्धान्तों-प्रक्रियाओं को बदल लेने वाले के पक्ष में आसानी से पुष्ट किया जा सके। उदाहरण के लिए यदि किसी एक क्षेत्र या समझौते के तहत बदले की कार्रवाई प्रभावी न हो सके या उसे लागू न किया जा सके तो उसे किसी दूसरे क्षेत्र में या दूसरे समझौते के अन्तर्गत लागू किया जा सकता है। इस तरह 'प्रभावी' और 'लागू' शब्दों के तहत किसी भी कार्रवाई को व्यावहारिक रूप से जायज ठहराया जा सकता है।

डंकेल प्रस्ताव 'ट्रिप्स', 'ट्रिम्स' और 'गैट्स' समझौतों को अलग से वैधानिक दर्जा नहीं प्रदान करता। इस तथ्य के विरुद्ध सभी दावे गलत हैं। यह दावा कि 'ट्रिप्स', 'ट्रिम्स' और 'गैट्स' को अलग वैधानिक दर्जा प्राप्त है, लेकिन यह केवल तभी सार्थक हो सकता है जब राष्ट्रों को, यदि वे महसूस करें कि ये समझौते उनके हित में नहीं है तो वे उनसे अलग रहने का अधिकार रखते हों। लेकिन यह विकल्प उपलब्ध नहीं है और डंकेल प्रस्ताव को ही एकमात्र विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

दरअसल डंकेल प्रस्ताव एक बहुत ही लम्बा, तकनीकी और जटिल दस्तावेज है। इसलिए इसकी बहुत ही सावधानी से समीक्षा की जानी चाहिए ताकि जहां-जहां दुराव-छुपाव किये गये हैं और जो अस्पष्टताएं रखी गयी हैं, उनका दुरुपयोग विकसित देश बाद में अपने मनोनुकूल व्याख्या कर के न कर सकें। उदाहरण के लिए हमारे विचार से 'ट्रिप्स' मसौदे की धारा 27 पैरा 1 जिसमें कहा गया है कि पेटेंट अधिकारों का उपयोग बिना किसी भेदभाव के किया जा सकता है, चाहे 'उत्पाद आयात किये गये हों या स्थानीय तौर पर हासिल किये गये हों' को इस अर्थ में व्याख्यायित किया जा सकता है कि आयातीकरण को एक पेटेंट की अनिवार्य कार्यप्रणाली के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। मतलब यह कि डंकेल प्रस्ताव का तत्काल प्रभाव से धारावार अध्ययन होना चाहिए।

## विकासशील देशों के पक्ष में फैसले की संभावना कम

प्रस्तावित विवाद निपटारा पद्धति यह सुनिश्चित करेगी कि यदि किसी विकासशील देश के संबंध में कोई विवाद पैदा हो तो विकासशील देश का स्पष्टीकरण या उसकी व्याख्या ही महत्वपूर्ण मानी जाएगी। जैसा कि मसौदे में दिया गया है कि जिस मामले में विवाद को लेकर आपसी बातचीत से कोई हल नहीं निकलेगा तो किसी एक पक्ष के अनुरोध पर एक पैनल का गठन किया जाएगा। यह पैनल जिसमें तीन सदस्य होंगे 'गैट' सचिवालय द्वारा नामजद होगा। इस उपबंध को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। यहां यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यदि एक बार 'गैट' सचिवालय को पैनल नामजद करने का अधिकार मिल गया तो किसी विवाद का फैसला विकासशील देश के पक्ष में होने की संभावना एक दम क्षीण हो जाएगी। यह हो सकता है कि एक पक्ष के रूप में किसी विकासशील देश के अनुरोध पर किसी विकासशील देश के नागरिक को ही पैनल में नामजद कर लिया जाए, लेकिन इसका कोई लाभ इसलिए नहीं मिलेगा क्योंकि सदस्यों का बहुमत सामान्यतः विकसित देशों का ही होगा। यही बात किसी अन्य ऐसे निकाय पर भी लागू होगी जहां कोई विकासशील देश अपनी अपील कर सके। इसलिए किसी वैकल्पिक विवाद निपटारा पद्धति की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए और उसे वार्ता के दौरान प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

# सुझाए गए परिवर्तन विकासशील देशों के हित में नहीं

विश्वजीत धर, फैलो

रिसर्च एण्ड इन्फारमेशन सिस्टम फार नॉन एलाइन्ड एण्ड अदर डिवलपिंग कन्ट्रीज

ऐसा प्रतीत होता है कि डंकेल प्रस्ताव ने जवाव की बजाय सवाल अधिक खड़े कर दिये हैं। उन विकासशील देशों के, जिनकी भुगतान संतुलन की स्थिति पिछले वर्ष के मुकाबले बदतर होती जा रही है, हितों के लिए यह आवश्यक है कि गैट के व्यापार नियमों की रूपरेखा पर समीक्षा की जाए। डंकेल प्रस्ताव के प्रारूप में कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को छोड़ दिया गया है।

गैट के पूर्ववर्ती ढांचे में विद्यमान बहुत से नियमों में डंकेल प्रस्ताव ने परिवर्तन करने का सुझाव दिया है। सुरक्षात्मक उपाय का मसला भी एक मुद्दा है, जिसमें परिवर्तन करने का सुझाव दिया गया है। पहली दृष्टि से देखने पर ऐसा लगता है कि सुरक्षात्मक उपाय में परिवर्तन करने से विकासशील देशों को हानि नहीं होगी, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है।

गैट के अनुच्छेद 19 के अन्तर्गत आयात संरक्षण खतरे से सुरक्षात्मक उपायों का प्रावधान है। आयात संरक्षण के कारण घरेलू उद्योगों को धक्का पहुंचता है। डंकेल प्रस्ताव में इस अनुच्छेद के कुछ हिस्सों को बदल दिया गया है और कुछ की विस्तार से व्याख्या की गयी है और कुछ को अस्पष्ट छोड़ दिया गया है। यह बात विशेष रूप से डंकेल प्रस्ताव के अनुभाग 4 में निहित है, जिसमें विकासशील देशों से सम्बन्धित सुरक्षात्मक उपायों का प्रावधान है। विकासशील देशों के सम्बन्ध में जोड़े गये इस प्रावधान की गहराई से जांच पड़ताल की जरूरत है, क्योंकि इससे विकासशील देशों के निर्यात बाजार ढूंढने के प्रयासों को धक्का पहुंच सकता है। विकासशील देशों के निर्यात को एक सीमा तक ही अनुमति देना और उस सीमा से ऊपर होने पर सुरक्षात्मक कार्रवाई का प्रावधान होने से विकासशील देशों का हित नहीं होगा।

डंकेल प्रस्ताव के अन्तर्गत भले ही कपड़ा उद्योग को गैट में शामिल कर दिया जाए और बहुरेशीय व्यवस्था (मल्टी फाइवर एरेंजमेंट) को समाप्त कर दिया जाए, लेकिन सुरक्षात्मक उपायों के प्रावधान से विकासशील देशों के कपड़ा उद्योगों को हानि ही पहुंचेगी। प्रमुख वस्त्र व्यापारियों के रूप में विकसित देश प्रस्तावित सुरक्षा उपायों के प्रावधानों के अन्तर्गत कार्रवाई की जद में आ जाएंगे जो उनके बाजार तक पहुंचने के अवसरों को वाधित करेगी। हालांकि गैट में वस्त्र उद्योग को एकीकृत करने के प्रावधान दिये गये हैं, लेकिन अन्य अनेक ऐसी बाधाएं हैं जिनके कारण वस्त्रोद्योग में विकासशील देशों के निर्यात में वह गति नहीं आने पाएगी, जिसकी बात की जाती है।

कपड़ा व वस्त्रों से सम्बन्धित प्रावधान का मसला डंकेल प्रस्ताव के भ्रम पैदा करने वाले मसलों में से मात्र एक है। वस्तुओं से सम्बन्धित परिशिष्ट के 'आर' भाग में दिये गये भुगतान संतुलन सम्बन्धी प्रावधान भी इसी श्रेणी में आते हैं। यह प्रावधान, जो आयात पर नियंत्रण के लिए मात्रात्मक प्रतिबन्धों के प्रयोग से सम्बन्धित हैं, भुगतान संतुलन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने के लिए दिये गये हैं। सामान्य तौर पर गैट द्वारा इनकी अनुमति नहीं दी जाती। मौजूदा गैट नियमों की धारा 28 बी में यह प्रावधान है कि विकासशील देश आर्थिक विकास के दौरान भुगतान संतुलन की समस्या से ग्रस्त होने पर मात्रात्मक प्रतिबन्धों का उपयोग कर सकें। अब इस धारा को हटाये जाने का खतरा पैदा हो गया है। क्योंकि विकसित देशों ने यह माना है कि विकासशील देश अपनी विकासशील स्थिति से उबर चुके हैं इसलिए अब उन्हें आयात पर प्रतिबन्ध लगाने की कोई जरूरत नहीं।

इन सारी चीजों को देखते हुए डंकेल प्रस्ताव पर कहीं अधिक ध्यान देने की जरूरत है। इस प्रस्ताव में अन्तरराष्ट्रीय व्यापार को नियंत्रित करने वाले नियमों में जो व्यापक परिवर्तन सुझाये गये हैं उनके परिणाम भारत जैसे विकासशील देशों के हित में नहीं हो सकते।

## 'गैट' अब खुले बाजार का केन्द्र बन चुका है

**बी.के. कैला, संयोजक, नेशनल वर्किंग ग्रुप आन पेटेंट लॉज**
**( राष्ट्रीय सहारा संवाददाता गोविन्द मिश्र की बातचीत के अंश )**

**● हमारी आर्थिक परिस्थितियों और डंकेल प्रस्ताव के सन्दर्भ में आप क्या कहेंगे ?**

— पिछड़े वर्गों और क्षेत्रों की समस्या हमारे देश में यथावत है । इन वर्गों और क्षेत्रों को मुख्यधारा से जोड़ने का नियोजन करना जरूरी है । भारत जैसा विकासशील देश इसे नजरअंदाज नहीं कर सकता । संविधान में नागरिकों के जिन अधिकारों का उल्लेख है उसके आधार पर जो नीतियां या बुनियादी ढांचा तैयार किया गया है, उसे हम नकार नहीं सकते । लेकिन लगता है कि डंकेल प्रस्ताव स्वीकार करने के बाद अब कानून और नीतियां भारतीय संविधान पर आधारित न होकर डंकेल प्रस्ताव पर आधारित होंगी । 'गैट' की कमेटियां होंगी जो निरीक्षण करेंगी कि संबंधित पार्टियों ने ठीक से कानून बनाये हैं या नहीं । व्यक्तिगत तौर पर कोई भी देश दखलअंदाजी करके कह सकता है कि कथित-कानून 'गैट व्यवस्था' के अनुसार नहीं है । इस स्थिति में या तो वे इसमें तबदीली करने को कहेंगे अन्यथा प्रतिकारात्मक रवैया अपनायेंगे ।

महत्वपूर्ण बात यह है कि विकसित और विकासशील देशों की विश्व में श्रेणियां हैं । कुछ पूर्णरूप से विकसित है और कुछ विकासशील देशों की श्रृंखला से निकलकर विकसित हो चुके हैं । विकासशील देशों के विकास स्तर में भी बहुत फर्क है । इसलिए पूरे विश्व में आर्थिक दृष्टि से एक ही कानून लागू हो यह बात व्यावहारिक दृष्टिकोणं से बहुत कमजोर है ।

**● जाहिरा तौर पर 'गैट' एक स्वतंत्र संगठन है, लेकिन परोक्ष रूप में यूरोप के कुछ देशों का नाम इससे जुड़ा है । क्या आप बतायेंगे कि वह कौन से देश हैं, जिनसे 'गैट' को अप्रत्यक्ष रूप में फायदा है या कि वह किनका शुभचिन्तक है ?**

— जितने भी विकासशील देश हैं वे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों रूप से विकसित देशों पर निर्भर हैं । विकसित का अर्थ है कि आर्थिक रूप से पूर्ण सक्षम हैं वह । आई.एम.एफ. और विश्व बैंक के जरिये इन विकसित देशों पर निर्भरता एक महत्वपूर्ण पहलू है ।

'गैट' का पूर्व इतिहास और 'गैट' की पूर्व सम्पन्न वार्ता की रोशनी में यह समझना मुश्किल नहीं कि विकसित देशों ने विकासशील देशों पर पूर्ण रूप से आर्थिक एवं व्यवसायिक दृष्टि से छा जाने का प्रयास निरंतर जारी रखा है और इस प्रक्रिया में जो कानून अपनाये जाने चाहिए उन पर जोर दिया है ।

मौजूदा 'उरुग्वे राउंड' के अन्तर्गत 'गैट' के विकास एवं उत्थान से संबंधित चरित्र की भूमिका समाप्त हो चुकी है । कहना चाहिए कि 'गैट' का सैद्धांतिक अस्तित्व चुक गया है और वह अब खुले बाजार का केन्द्र बिन्दु बन गया है । आई.पी.आर., ट्रिम्स, ट्रिप्स या कृषि से संबंधित किसी भी प्रस्ताव का अध्ययन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि हर जगह बाजार हथियाने की प्रवृत्ति हावी है । व्यावसायिक प्रभुता के उद्देश्य को हर क्षेत्र में प्राथमिकता दी गयी है । इस प्रक्रिया में यदि किसी क्षेत्र में मुकाबला मुश्किल हो तो उसका भी रास्ता निकाला है । सब्सिडी के रूप में जो कुछ रियायतें दी जाती हैं, उन्हें कम करने की कोशिश की गयी है । इसका मतलब साफ है कि सब्सिडी बंद कर देने पर उत्पादों की कीमतों में वृद्धि होगी और मुकाबला आसान हो जाएगा । लाभांश भी अधिक मिलेगा । उत्पादों की कीमतों का यह अन्तर उन्हें सीधे बाजार में ले आएगा और लागत पर आधारित बाजार भाव उनके हक में रहेगा ।

**● मौजूदा समस्या से भुगतान संतुलन का संबंध आपकी राय में क्या हो सकता है ?**

— मौजूदा स्थिति में भुगतान संतुलन का संबंध इसलिए गहरा गया है, क्योंकि 'गैट' में विकासशील देशों के लिए जो विशेष प्रावधान था और जिसके आधार पर वहां औद्योगिक एवं कृषि क्षेत्र में विकास संभव हुआ वह विशेष प्रावधान अब केवल 20 विकासशील देशों (संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार लगभग 45 देशों पर) लागू एकाधिकार दिया जा रहा है । इससे हमारी आयात पर निर्भरता बढ़ जाएगी । हो सकता है आगे चलकर आयात-निर्यात का भुगतान-असंतुलन बढ़ता ही जाए ।

कस्टम ड्यूटी सम्बन्धित कर को घटाना है, जिससे आयात किये जाने वाले उत्पादनों के साथ या तो कड़ा मुकाबला करना पड़ेगा या फिर घरेलू उत्पादों में भारी कटौती करनी होगी । अगर हम प्रतियोगिता में सक्षम नहीं हुए तो हमारी उपभोग क्षमता निश्चय ही कम होती जाएगी । ट्रिम्स के तहत एक और बात सामने आती है कि विदेशी कम्पनियां किसी भी क्षेत्र में यहां निवेश कर सकती हैं । जिन क्षेत्रों में हम पूर्ण सक्षम और आत्म निर्भर हैं, बाहरी- निवेश के बाद वहां उत्पादन दोहरे हो जाएंगे और हमारी सामर्थ्य या पूंजी-लाभ का कोई अर्थ नहीं रह जाएगा । हमारी टैक्नोलाजी के मुकाबले उनकी टैक्नोलाजी आधुनिक होगी । इसलिए यहां भी पिछड़ना सम्भव है । कुल मिलाकर इसका भार हमारी उत्पादन क्षमता और धन परिणाम दोनों पर पड़ने वाला है ।

**● इस स्थिति से तो उपभोक्ताओं को लाभ होगा, इस विषय में आपका क्या विचार है ?**

— उपभोक्ता पहलू को अगर आप 'शार्टकट' दृष्टि से देखें तो यह सकारात्मक पहलू हो सकता है, किन्तु इसके दूरगामी परिणाम घातक सिद्ध होंगे । क्योंकि अगर आपको बाहरी उत्पादन उपलब्ध हुए और भुगतान-असंतुलन बढ़ता गया तो इससे आपकी आर्थिक व्यवस्था को धक्का पहुंचेगा । इस विकासशील अर्थ व्यवस्था में अगर हमारा देश आत्म-निर्भर नहीं हो सका तो आगे चलकर भारी संकट के संकेत स्पष्ट हैं । आर्थिक समस्याएं इतनी जटिल हो जाएंगी कि उनसे उबरना असम्भव होगा ।

**● 'डंकेल-प्रस्ताव' की स्वीकृति को लेकर भारत के सामने कौन-सी मजबूरियां हो सकती हैं जो उसे विवश करें ?**

— 'गैट' के सभी सदस्यों के सामने कुछ न कुछ अनिवार्य शर्तें तो हैं ही । क्योंकि इसे 'ग्लोबल पैकेज' के रूप में प्रस्तुत किया गया है । अब चाहे

आप इसे अपनायें या छोड़ें । दोनों ही स्थितियों में नुकसान तो है । यह विश्लेषण करना जरूरी है कि हस्ताक्षर न करके हमें क्या नुकसान हो सकते हैं और हस्ताक्षर करने के बाद क्या नुकसान हो सकते हैं । 'गैट' हमारे समक्ष एक प्रस्ताव है जिसके आधार पर हमें तय करना है कि हम क्या चाहते हैं- अन्तरराष्ट्रीय व्यापार व्यवस्था में भागीदार बनना या अपनी आर्थिक आजादी को बचाते हुए आत्म-निर्भर बनना । खुद विकसित देशों में 'गैट' के कृषि सम्बन्धी कानून को लेकर मतभेद है ।

इसमें शक नहीं कि मौजूदा सरकार सक्षम और अनुभवी है, लेकिन यह 'ड्राफ्ट' बहुत जटिल है । कई धाराओं में परस्पर टकराव है इसका व्यावहारिक पक्ष भी अस्पष्ट है । इसलिए इसका गहराई से अध्ययन और कानून के दायरे में विश्लेषण बहुत जरूरी है । इस समझौते को स्वीकार करने और व्यावहारिक रूप से लागू करने से पूर्व बड़ी सूझ-बूझ की आवश्यकता है । मेरी राय में तो एक संसदीय बोर्ड गठित किया जाए जिसमें विशेषज्ञों की सहायता से तमाम पहलुओं को मद्देनजर रख कर एक विश्लेषणात्मक रिपोर्ट तैयार की जाए । संसद में चर्चा से पहले 'ड्राफ्ट' की सभी जटिलताएं सुलझ जानी चाहिए तभी चर्चा सार्थक होगी ।

**• वित्त मंत्री मनमोहन सिंह का कहना है कि मौजूदा आर्थिक नीतियों से अर्थव्यवस्था में सुधार आएगा । इस पर आपकी टिप्पणी ?**

— मैं तो इसे एक जुआ मानता हूं । जुए में जुआरी हार भी सकता है जीत भी सकता है, ऐसा कोई उदाहरण हमारे पास नहीं है कि हम पूरी तरह आश्वस्त हो सकें । यह ठीक है या गलत इसका निर्णय तो भविष्य ही कर सकेगा । जिन अर्थशास्त्रियों ने बजट का गहराई से अध्ययन किया है वह मिले-जुले मत प्रस्तुत करते हैं । कुछ उद्योगपतियों को लग रहा है कि उदार औद्योगिक नीतियों के चलते वह अपनी क्षमता बढ़ा सकेंगे । सरकारी प्रतिबन्ध हट जाने के बाद वह अभी खुद को आजाद अनुभव करके राहत महसूस कर रहे हैं । विदेशी मुद्रा की उपलब्धता, निर्यात की छूट, लाइसेंसिंग व्यवस्था में छूट आदि उदार नीति उद्योगपतियों को अनुकूल लग रही है । किन्तु मुझे लगता है कि उदार नीतियों की इतनी बड़ी खुराक को पचा लेना आसान काम नहीं है । इसका प्रभाव उल्टा भी हो सकता है अर्थव्यवस्था मजबूत होने के बजाय कमजोर भी हो सकती है ।

एक पहलू आई.एम.एफ. और विश्व बैंक से सम्बन्धित भी है । यह सही है कि उनकी कुछ अपनी नीतियां और शर्तें हैं । उनकी शर्तें विदेशी हितों से निर्देशित हैं । यह देश निश्चय ही हमारे सगे-सम्बन्धी नहीं है । वह अपना भला सोचेंगे या हमारा । अपने फायदे के लिए वह किसी न किसी देश के कन्धे पर ही बंदूक रखकर निशाना साधेंगे । विदेशी कम्पनियों से यह आशा रखना कि वह यहां निवेश भी करें, उत्पादन भी करें और उत्पादन को बढ़ावा देकर अपनी हानि भी करें, एक अर्थहीन बात है ।

**• डंकेल प्रस्ताव के प्रति भारत का रवैया क्या होना चाहिए ?**

— डंकेल प्रस्ताव में एक बात तो स्पष्ट है कि बहुत से मुद्दे ऐसे हैं जो भारत सहित कई विकासशील देशों के लिए उचित नहीं हैं । भारत को सभी विकासशील देशों को विश्वास में लेकर दबाव डालना चाहिए कि डंकेल-प्रस्ताव को विकासशील देशों के हित में संशोधित किया जाए और कड़े प्रतिबन्धों को वापस लिया जाए । आज राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से सोचने की जरूरत बहुत अहम है ।

**• चीन ने अमरीका के साथ मिलकर जिस तरह खुद को पीछे कर लिया उसका क्या प्रभाव पड़ेगा ।**

— अमरीका ने स्पेशल 301 चीन, थाईलैंड और भारत पर लगाया था । नवम्बर 1991 में जब वह अवधि खत्म हुई तो अमरीका की धमकी के जवाब में चीन ने कहा 'जो करना है वह कर लें ।' अन्ततः जनवरी में दोनों में कुछ समझौता हो गया । यह बात सीधी न होकर काफी जटिल है । चीन का अमरीका के साथ तीस हजार करोड़ सरप्लस का व्यवसाय है । यह आधार बहुत मजबूत है ।

वह 'गैट' का सदस्य भी नहीं है । चीन का समझौता अमरीका के साथ है । वह अपना कानून बदले या न बदले, इस स्थिति का प्रभाव दूसरे देशों पर नहीं पड़ेगा । कानून में फेरबदल 'गैट' से बाहर निकलकर ही किया जा सकता है ।

# भारतीय पेटेंट ऐक्ट - 1970

## विदेशी दबाव का दुष्चक्र

आने वाले सत्तर दिनों के अन्दर भारतीय राजनय की जिनेवा में दो बार अग्नि-परीक्षा होगी। पहले उसे 26 फरवरी को कार्ला हिल्स का सामना करना पड़ेगा और दूसरी बार अप्रैल में उरुग्वे चक्र की गैट वार्ता का। इन दोनों मुकाबलों में भारतीय राजनय अपने पैटेन्ट अधिनियम 1970 की सलामती का हर सम्भव प्रयास करेगा और प्रतिरोधी उसे हलाक (खात्मे) करने की हर कोशिश आजमायेंगे। देखना यह है कि किसकी कोशिश सफल रहती है।

हालांकि भारतीय पेटेन्ट एक्ट 1970 के सिर पर पिछले दशक के मध्य से ही अमरीकी कोष की तलवार लटक रही है, मगर भारत अमरीका का दृढ़ता से मुकाबला करता चला आ रहा था। भारत की इस दृढ़ता में पहली लोच तब आयी जब राजीव गांधी 1988 में अमरीका-भारत वैज्ञानिक प्रोद्यौगिकी करार को बढ़वाने के लिए बौद्धिक अधिकार सम्पत्ति पर गैट के मंच पर वार्ता के लिए राजी हो गये। इसके बाद से लगातार भारतीय अर्थव्यवस्था का पतन, खाड़ी में अमरीका की निर्णायक विजय, साम्यवादी विश्व का ध्वंस तथा एक ध्रुवीय विश्व की छदम रचना का मजबूत होते तर्कजाल ने अमरीकी पलड़े ताकत में जो वृद्धि की है उसके समक्ष भारतीय प्रतिरोध के पैर उखड़ने लगे हैं। भारतीय प्रतिरोध स्वर के मंद पड़ने का एक कारण यह भी है कि पिछले साल तक अमरीका भारत पर दबाव की कमान जहां अकेले थामे था, वहीं आज यह कमान डुंकेल प्रस्ताव के जरिये गैट और कर्ज देने वाले आई.एम.एफ. के हाथों में भी पहुंच गयी है। इसलिए अब भारत को अपने पेटेन्ट एक्ट 1970 की सुरक्षा तथा सलामती के लिए त्रिपक्षीय दबाव का सामना करना पड़ रहा है।

अमरीका और गैट (जनरल एग्रीमेंट आन ट्रेड एण्ड टैरिफ) भारत पर किस तरह उसके पेटेन्ट अधिनियम 1970 को बदलवाने के लिए दबाव डाल रहे हैं, इस पर हम आगे चर्चा करेंगे। पहले भारत में पेटेन्टों की उत्पत्ति और पेटेन्ट अधिनियम 1970 तक के सफर के बारे में थोड़ा जान लें। आज अमरीका और गैट दोनों भारत पर पेरिस कन्वेंशन पर हस्ताक्षर करने के लिए दबाव डाल रहे हैं। भारत में पहला पेटेन्ट कानून तब बना था जब इस कन्वेंशन का दूर-दूर तक कहीं नामो-निशान नहीं था।

पेरिस कन्वेंशन फॉर दि प्रोटेक्शन ऑफ इंडस्ट्रियल प्रापर्टी को संक्षेप में पेरिस समझौता कहते हैं। इस समझौते का जन्म पेरिस में सन् 1883 में हुआ था जबकि पहले भारतीय पेटेन्ट अधिनियम का जन्म इस समझौते के 27 साल पहले ही हो चुका था। फिर भी भारत के पहले पेटेन्ट अधिनियम और पेरिस समझौते के नियम कानूनों में समरूपता थी। यह शायद इसलिए थी क्योंकि इन दोनों के जन्मदाता उपनिवेशवादी अंग्रेज ही थे जिनका एक मात्र लक्ष्य दुनिया के बाजार पर आधिपत्य तथा उनके संसाधनों का दोहन था।

भारत में 1856 से 1947 तक जितने भी पेटेन्ट अधिनियम बने, उन सबका मूल मकसद भारतीय बाजार पर अंग्रेजी इजारेदारी को बरकरार रखना था। पेरिस समझौते में यही मकसद अपने विशद रूप में था। भारतीय पेटेन्टों का मकसद (तत्कालीन) जहां ब्रितानी साम्राज्य को भारतीय बाजार प्रदान करना था, वहीं पेरिस समझौते का लक्ष्य विकासशील बाजार को विकसित (उपनिवेशवादी समूह को) देशों की झोली में डालना था। गुलाम हिन्दुस्तान में जो भी पेटेन्ट नियम लागू हुए उससे इस देश की अर्थव्यवस्था जर्जर हुई। 1856 में पहला पेटेन्ट अधिनियम बनने के बाद भारत में जो 33 पेटेन्ट रजिस्टर्ड हुए उनमें एक भी देशी नहीं था। सभी पेटेन्ट विदेशियों द्वारा रजिस्टर्ड करवाये गये थे। इस पेटेन्ट अधिनियम के बाद भारत के वस्त्र उद्योग पर बहुत प्रभाव पड़ा। हमारा पारम्परिक कपड़ा बुनाई उद्योग 'गाढ़ा बुनकरों' के हाथों से निकलकर मैनचेस्टर के कपड़ा बनियों के हाथों में चला गया। इस पेटेन्ट अधिनियम के अन्तर्गत जिन कम्पनियों ने पेटेन्ट रजिस्टर्ड करवाये उन्होंने नाममात्र को ही भारत में उत्पादन किया। सारा का सारा उत्पाद ब्रिटेन से ही आया।

इस पेटेन्ट अधिनियम को 1911 में संशोधित किया गया। यह संशोधन भारतीय व्यापारियों, कारीगरों तथा उद्योगपतियों के विरोधस्वरूप हुआ। मगर इस संशोधन के बावजूद देश को कोई विशेष फायदा नहीं हुआ। इस संशोधन के बाद भी पेटेन्ट रजिस्टर्ड करवाने वालों में 91 प्रतिशत विदेशी थे। पेटेन्ट रजिस्ट्री के लिए किये गये कुल 492 आवेदनों में सिर्फ 9 प्रतिशत आवेदन ही भारतीय थे। भारत के पहले पेटेन्ट अधिनियम 1856 के बाद से आखिरी पेटेन्ट अधिनियम 1970 जो कि अभी तक लागू है, के अन्तर्गत रजिस्ट्री करवाने वालों में किस तरह विदेशियों का वर्चस्व है उसे दी गयी तालिका से समझा जा सकता है।

आजादी के बाद सन् 1948 में भारत सरकार ने रिटायर्ड जज बख्शी टेकचंद के नेतृत्व में एक जांच समिति का गठन किया। इस जांच समिति को यह कार्यभार सौंपा गया कि वह अध्ययन करके बताये कि तत्कालीन पेटेन्ट अधिनियम (1911) भारत के हित में है या नहीं। इसके बाद सन् 1957 में जस्टिस एन राजगोपाल आयंगर के नेतृत्व में भी एक कमेटी इसी काम के लिए गठित की गयी। इन दोनों जांच कमेटियों का अध्ययन निष्कर्ष था कि पेटेन्ट अधिनियम 1911 भारत के हितों की पूरी तरह उपेक्षा करता है। अतः भारत को न केवल इस अधिनियम में पर्याप्त रद्दोबदल करने चाहिए अपितु उसे पेरिस समझौते में भी शामिल नहीं होना चाहिए। इन दोनों जांच कमेटियों ने जो संस्तुति नये पेटेन्ट अधिनियम के लिए दी, उसको लेकर बुद्धिजीवियों, स्वतंत्रता

संग्राम सेनानियों, लेखकों, पत्रकारों तथा कई सांसदों ने सरकार से नये पेटेन्ट अधिनियम बनाने के लिए आन्दोलन के जरिये मांग की। परिणामस्वरूप 1970 में नये भारतीय पेटेन्ट अधिनियम का जन्म हुआ। भारतीय पेटेन्ट अधिनियम 1970 अपने सभी पूर्ववर्ती पेटेन्ट अधिनियमों के विपरीत पूरी ताकत से भारतीय हितों की रक्षा करता है। अपनी इस राष्ट्रवादी विशेषता के चलते तीसरी दुनिया के देश इसे एक आदर्श पेटेन्ट अधिनियम तो मानते ही हैं, अंकटाड जैसे संगठनों ने भी इस अधिनियम की तारीफ की है। दूसरी तरफ अपने निजी उद्योग व्यापार को बढ़ावा तथा आविष्कारक और उपभोक्ता के बीच समन्यवादी दृष्टिकोण अपनाने वाला हमारा यह कानून अमरीका तथा उसके मुट्ठी भर अर्थसम्पन्न मित्रों की आंख का कांटा बना हुआ है, क्योंकि अपनी विशेषताओं (विशेषताएं देखिए) के चलते यह अधिनियम बाजारगत इजारेदारी पर प्रतिबन्ध लगाता है। अमरीका जैसे देश इस अधिनियम की इस विशेषता को संरक्षणवादी शब्द से परिभाषित करते हैं और इस अधिनियम को खत्म करवाने के लिए भारत सरकार पर हर तरह की दबाव डालते हैं।

पेटेन्ट अधिनियम 1970 लागू होने के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था ने द्रुतगति से विकास किया है। इसी अधिनियम का प्रभाव है कि 1970 के पहले जहां हम अपनी आवश्यकता का 90 प्रतिशत तक कीटनाशक आयात करते थे वहीं आज हम एशिया में जापान के बाद दूसरे सबसे बड़े कीटनाशक निर्यातक हैं -1989-90 में हमने 61.02 करोड़ रुपये का कीटनाशक निर्यात किया और 91-92 में इसके 80.00 करोड़ की सीमा को भी लांघ जाने की उम्मीद है। इस अधिनियम के लागू होने के बाद भारत के औषधि उद्योग में तो चार चांद लग गये हैं। 1975 में भारत का बल्कड्रग्स उत्पादन 38 प्रतिशत देशी तथा 62 प्रतिशत विदेशी हाथों में था और फार्म्यूलेसन 50-50 प्रतिशत दोनों में बंटा था।

मगर 1988 पहुंचते-पहुंचते स्थिति बदल गयी। 1988 में बल्कड्रग्स (थोक दवा) उत्पाद 62 प्रतिशत विदेशी हाथों से निकलकर मात्र 18 प्रतिशत विदेशी हाथों में पहुंच गया। यही कहानी फार्मूला दवाइयों में भी दुहरायी गयी। 1975 में जहां फार्मूला दवाइयों का उत्पादन देशी और विदेशी दोनों हाथों में 50-50 प्रतिशत था, वहीं 1988 में देशी और विदेशी भागीदारी का अनुपात 60.40 हो गया। 1982-83 में भारत ने 111 करोड़ रुपये की थोक एवं फार्मूला दवाइयों का निर्यात किया था जो 1990-91 में 1230 करोड़ रुपये जा पहुंचा। ये आंकड़े प्रगति की कहानी स्वयं कह रहे हैं।

पेटेन्ट अधिनियम 1970 का हमारी आर्थिक प्रगति की गति को तेज करने में कितना बड़ा हाथ है उसका अनुमान इन्हीं तथ्यों से लगाया जा सकता है कि 1970-71 में हमारी औद्योगिक विकास सूचकांक जहां 65.3 था, वह 1980-81 में 100.00 और 1988-89 में बढ़कर 181.1 हो गया। इसी अवधि में हमारा आयात भी 1970-71 में 1634 करोड़ रुपये था जो बढ़कर 1989-90 में 35412 करोड़ रुपये हो गया। जबकि निर्यात जहां 1970-71 में 1535 करोड़ रुपये था वह 1980-81 में 6711 करोड़, 1988-89 में 20,295 करोड़ और 1989-90 में बढ़कर 27,691 करोड़ (अनुमानित) हो गया। विकास के आंकड़े पेटेन्ट अधिनियम 1970 का महत्व स्वयं कहते हैं।

हालांकि इस तथ्य से मुंह नहीं मोड़ा जा सकता कि हमारे आयात की निर्यात के मुकाबले वृद्धि ज्यादा तीव्र रही जिससे हमारे पास सुदृढ़ और सम्पन्न विदेशी मुद्राकोष का अभाव रहा, लेकिन यह भी सच है कि यदि हमारे पास पेटेन्ट अधिनियम 1970 न होता तो हमारी हालत और भी खस्ता होती। मगर यह कहना कि हमारी आंशिक किन्तु लगातार आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख प्रगति को देखकर अमरीका हमारे पेटेन्ट अधिनियम 1970 के पीछे हाथ धोकर पड़ गया, बिल्कुल गलत होगा। वास्तविकता तो यह है कि हमारी प्रगति अमरीकी अर्थव्यवस्था के लिए कोई मायने ही नहीं रखती। अमरीका की वास्तविक समस्या तो उनकी अपनी अवनति है, जो पिछले दशक से लगातार गहरायी जा रही है। रोनाल्ड रीगन ने इस पतनोन्मुख अर्थव्यवस्था को 'कन्ज्यूमिंग लिबरलाइजेशन' (उपभोक्ता उदारीकरण) के जरिये ढहने से बचाना चाहा, मगर इस तौर तरीके ने जिसे 'रिग्नामिक्स' कहा गया, समस्या को और ज्यादा गहराया। अमरीका का व्यापार धारा 1984 में जहां 123 बिलियन डालर था वह 85 में बढ़कर 134 बिलियन डालर 86 में 155 बिलियन डालर, 87 में 170 बिलियन डालर 1988 में 120, 89 में 109 और 90-91 में 105 से 110 बिलियन डालर के बीच अवस्थित है। अमरीका के सबसे बड़े व्यापार सहयोगी जापान के साथ उसका व्यापार घाटा 41 बिलियन डालर पहुंच गया जो कि दोनों देशों की जनता के बीच बढ़ते तनाव का कारण बनता जा रहा है।

अमरीका अपनी इन्हीं आर्थिक समस्याओं का निदान भारत के वृहद उपभोक्ता बाजार में देख रहा है। 'सेंटर फॉर मानिटरिंग द इंडियन इकोनॉमी' के एक अध्ययन के मुताबिक, भारत में 20 करोड़ मध्यवर्गीय उपभोक्ता हैं जो कि साझे यूरोप के 34 करोड़ उपभोक्ताओं के बाद दुनिया का सबसे बड़ा उपभोक्ता समाज है। यही उपभोक्ता समाज अमरीका की आंखों में चमक और मुंह में पानी पैदा कर रहा है और वह हमारे पेटेन्ट अधिनियम 1970 को बदलवाने के लिए हर सम्भव कोशिश कर रहा है। भारत एक नहीं तीन-तीन दबाव दुष्चक्रों में फंस गया है। अतः देश के शुभचिन्तकों को अब सिर्फ सरकार के भरोसे नहीं रहना चाहिए, देश दूसरी बार कम्पनी साम्राज्य (बहुराष्ट्रीय कम्पनियां) में फंसे, इससे पहले जन चेतना का निर्णायक कदम उठाना चाहिए।

• गोविंद मिश्र
• बी.डी.एस. गौतम

**तालिका**

| वर्ष | पेटेंट रजिस्ट्री हेतु किये गये कुल आवेदन | भारतीयों द्वारा आवेदन का प्रतिशत | विदेशियों द्वारा आवेदन का प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 1856 | 33 | 0 | 100 |
| 1900 | 492 | 9 | 91 |
| 1920 | 1037 | 9.5 | 90.5 |
| 1940 | 741 | 28.8 | 71.2 |
| 1947 | 2370 | 9.3 | 90.7 |
| 1960 | 4503 | 14.7 | 85.3 |
| 1970 | 5142 | 21.7 | 78.3 |

स्रोत — नेशनल वर्किंग ग्रुप आन पेटेंट ला द्वारा जारी दस्तावेज